

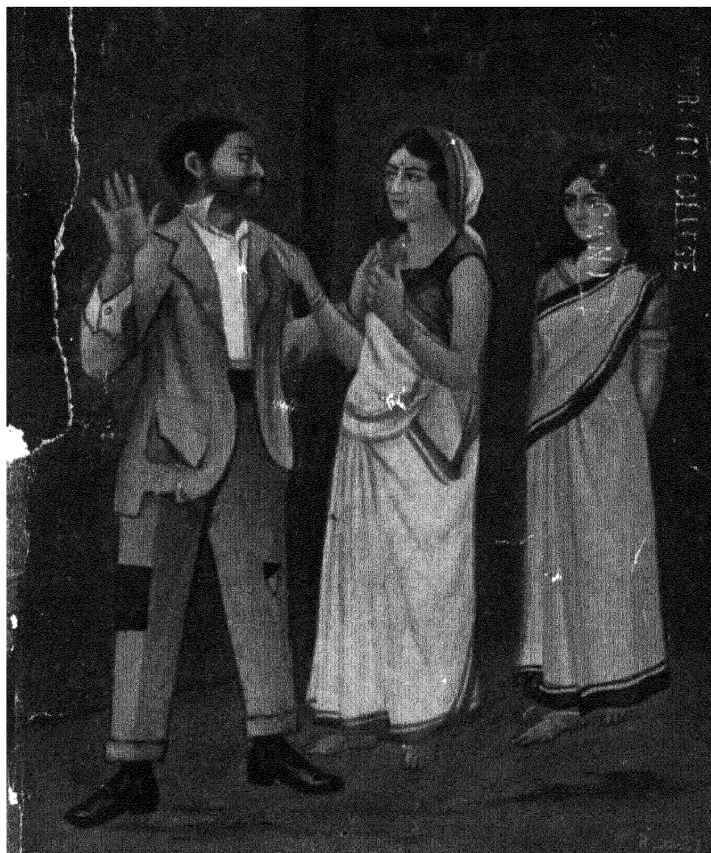
**TEXT PROBLEM
WITHIN THE
BOOK ONLY**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180905

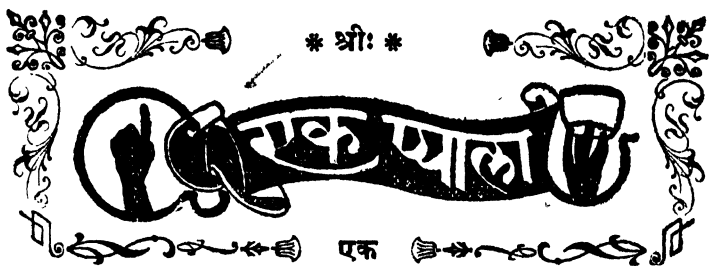
UNIVERSAL
LIBRARY

एक प्याला



only Cover.
Vantiya Press, Benares.

प्रकाशक—उपन्यास-बहार आफिस
कोशी बनारस



शिक्षाप्रद लोकप्रिय सामाजिक नाटक



भारत-दशा, मूर्तिमंडन, औरंगजेब, रुक्मिणी-मंगल इत्यादि के

लेखक—

श्रीयुत मुंशी 'फख्र' साहब

लेट आथर दी पारसी थियेट्रिकल कम्पनी आफ बम्बे ।

प्रकाशक  प्रवर्तक

शिवरामदास गुप्त,

उपन्यास-बहार आफिस, काशी; बनारस ।

All Rights reserved.

प्रथमवार]

१९२७ ई०

[मूल्य १)

श्री ५५
श्री टंक माला संख्या ५९



सम्पादक—

शिवरामदास गुप्त,

बनारस ।



NOTICE

This is to inform to all concerned that the writer has reserved himself all the rights of staging this drama and that any person or company found acting without the written permission of the writer, steps will be taken to restrain the infringement of his rights and to recover damages at the cost of the offending person or party.

—*Publisher.*

CHECKED 1950

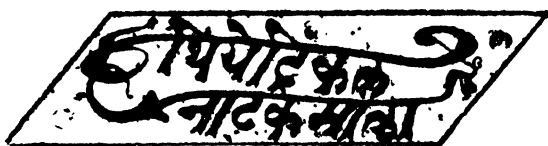
By SL. & L.

मुद्रक—

शिवराम सिंह,

Checked 1969

नैशनल प्रेस, बनारस कैण्ट ।



रंग बिरंगे चित्रों से सुसज्जित

भक्त सुदामा	१)	राधा माधव	III)
ध्रुव लीला	III)	कर्मवीर चंड	III)
सत्य विजय	III)	हिन्दू ललना	III)
काशीविश्वनाथ	III)	तेगे सितम	III)
सन्तान विक्रय	III)	देशोद्धार	II)
हिन्दू की गाय	II)	भीष्म प्रतिज्ञा	III)
धर्मोजय	१)	मीराबाई	II)
सती सुकन्या	III)	सती अनुसूया	II)
कलियुग की सती	III)	बगला भगत	II)
गरीब किसान	II)	संग्रामसिंह	III)
आजादी या मौत	III)	बालकृष्ण	II)
संसार चक्र	III)	परशुराम	III)
देशदशा	III)	मदिरादेवी	II)
धर्मयोगी	III)	विश्वामित्र	III)
भारतवर्ष	III)	हुब्बेवतन	II)
परीक्षित	१)	महात्मा कबीर	१)
गौतमबुद्ध	१)	तुलसीदास	II)
नलकम्पयन्ती	II)	श्रीरामलीला	II)
पत्नीव्रत	III)	विल्वमंगल	II)
सावित्री सत्यवान	III)	भारत रमणी	III)
भक्त प्रह्लाद	III)	गंगाघतरण	II)
रुक्मिणी मंगल	II)	अत्याचार	III)
भक्त विदुर	II)	श्रवणकुमार	II)

सीता बनवास	III)	काली नागिन	II=)
श्रीमती मञ्जरी	II=)	शरीफ बद्माश	II=)
शकुन्तला	III)	ख्वाबे हस्ती	I=)
सती सुलोचना	III)	खून का खून	I=)
हिन्दू-स्त्री	III)	असीरेहिसं	II)
सौभाग्य सुन्दरी	III)	सैदेहवस	I=)
अजामिल उद्धार	III)	यहूदी की लड़की	II)
विक्रम चरित्र	II=)	खूने नाहक	I=)
चक्रवर्ती चन्द्रगुप्त	II=)	खूबसूरत बला	II)
सम्राट अशोक	III)	जहरी साँप	I=)
बीर बाला	II)	दुश्मने ईमान	II=)
सतीलीला	I=)	गोरख धन्दा	II)
शिव पार्वती	III)	भूल भुलइयाँ	I=)
दुखिया भारत	II)	शहादेनाज	I=)
बीर छत्रसाल	I=)	सफेद खून	I=)
आँखों का गुनाह	II)	शाहीफरमान	II)
ऊषा अनिरुद्ध	II)	आतशीनाग	II)
संगीत थियेटर	I=)	सती सारन्धा	II)
रागिनी थियेटर—	I=)	चलता पुर्जा	II=)
बहार थियेटर	I=)	भारत दशा	III)
दूसरा भाग	II=)	मशहूर गवैया	III)
तीसरा भाग	I=)	मूर्तिमंडन	III)
बाल-रत्न-भोज	II)	एक प्याला	१)
मेरी आशा	III)	औरंगजेब (यंत्रस्थ)	
गौरस सिकन्दर	III)	आशा निराशा	,,

पता-शिवरामदास गुप्त, उपन्यास-बहार आफिस-काशी बनारस ।

२ भूमिका

भारत वर्ष के नाट्यकारों में स्वर्गीय श्रीराम गणेश गडकरी का स्थान बड़ा उच्च है। श्री बिठ्ठल सीताराम गुर्जर जी ने उनके विषय में लिखा है कि “वे महाराष्ट्र-नाट्य-देवी के कंठहार की सर्वोत्तम मणि थे”। उनके लिखे हुए नाटकों में “एकच प्याला” अपने ढंग का एक मिराला नाटक है। मदिरा पान के दोषों को चित्रित करने में जो सफलता इस नाटक को प्राप्त हुई है, वह इस विषय पर लिखे हुए नाटकों को कदाचित ही प्राप्त हुई हो। प्रस्तुत पुस्तक उसी महत्वपूर्ण नाटक का छायानुवाद है।

इस पुस्तक में दोषों की कमी नहीं है, हरेक पृष्ठ पर दोष दिखाई देंगे। परन्तु उन सब के होने हुये भी इसमें एक गुण ऐसा है जो सब दोषों को पूर्णतया आच्छादित कर देता है। वह गुण यह है कि यह नाटक हमारे एक मुसलमान भाई की लेखनी से निकला है। वे उर्दू में अपनी कलम चमका सकते थे। परन्तु अन्य धर्मावलम्बी होने हुये भी वे इतने उदार हैं कि इस नाटक को मुसलमानी जामा न पहना कर सुर तुलसी केशवादि द्वारा बुनी हुई साड़ी से ही उन्होंने इस को विभूषित करने की चेष्टा की है। हिन्दी के विशाल मन्दिर में जहाँ अनेक भाड़ फानूस तथा रात को दिन बना देने वाली बिजली की

ज्योति से हिन्दी-माता का हृदय आलहादित होगा, वहाँ श्रद्धा भक्ति से समर्पित इस क्षुद्र दीपक की टिमटिमाती हुई रोशनी भी माता को स्नेहार्द्र किये बिना न रहेगी ।

मेरा उद्देश्य समालोचना नहीं है जो अन्य साहित्य सेवियों का कार्य है । मेरा काम अपने हिन्दू पाठकवर्ग तथा अन्य हिन्दी-प्रेमियों से लेखक महोदय का परिचय करा देना है । आप का हिन्दी भाषा के प्रति यह उत्साह आदरणीय तथा अनुकरणीय है । आप की यह प्रथम कृति है । परमात्मा करे वह दिन शीघ्र आवे कि आप हिन्दी के उत्तम नाटककार हों ।

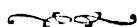
राम कुमार चौबे

M. A. L. T.

M. R. A. S. (Lond.)



पात्र-परिचय



पुरुष पात्र

मोतीलाल—एक शराबी वक़ील ।

प्रेमचन्द—मोतीलाल का रक्षक एक डाक़ूर ।

केशव—मोतीलाल का मुंहलगू शराबी नौकर ।

नाराचन्द—मोतीलाल का साला ।

रूप चन्द—एक सूद खोर मारवाड़ी ।

पठान—एक सूदखोर पठान ।

रमानन्द—एक साहुकार ।

भगीरथ—शराब से नफरत करने वाला मनुष्य ।

विष्णुदत्त—एक शराबी ब्राह्मण ।

खुदा बक्स—केशव का शराबी मित्र ।

रहीम बक्स—केशव का शराबी मित्र ।

दारोगा, डाक़ूर, अमीन, शराबी इत्यादि ।

स्त्री-पात्र

लक्ष्मी—मोतीलाल की पतिभक्ता स्त्री ।

चंचला—केशव राम की स्त्री लक्ष्मी की सहेली ।

चंचला—उसी नाम की दूसरी रमानन्द की स्त्री ।



❀ कामिकल सीरीज़ ❀

⇒ के ⇐

सर्वोत्तम लोकप्रिय शिक्षाप्रद प्रहसन ।



नई रोशनी	॥) जोरू का गुलाम	।)
कंजूस की खोपड़ी	॥) एकशा नंबर वन	,,
डुप्लीकेट	।) विजिटिंग कार्ड	,,
स्वामी जटानन्द	।) नाक में दम	।)
बेटिंग रूम	॥) फैशन का मार	,,
डबल जोरू	॥) खान्दानी डाकूर	,,
हरिश्चोम्-तत्सत्	।) करेन्सी नोट	,,
खुशामदी टट्टू	।) बड़े बाप की चेटी	,,
दुमदार सितारा	।) काठ का उल्लू	।)
घोटाला पर घोटाला	।) पौराणिक की शंका	,,
सटक सीताराम	।) नीम जन्टिलमैन	,
भंडाफोड़	।) गोबर गनेश	,,
सोड़े की बोतल	।) गडबड़ घोटाला	॥)
चौपटानन्द	।) मर्दमार औरत	।)
सम्पादक की दुम	।) बुढ़ापे की हवस	।)
हकीम हकनाहक	।) घोंघा बसन्त	।)
मूर्खानन्द	।) उल्लू की दुम	,,
गुरु घन्टाल	।) लबड़धोंधों	,,
धोखे की टट्टी	।) धमाचौकड़ी	,,

पता-शिवरामदास गुप्त, उपन्यास बहार आफिस, काशी-बनारस ।



मंगलाचरण ।

(लक्ष्मी इत्यादि का बंदना करते नज़र आना)

सब—

गाना ।

भवसागर से तारो हम सबको हे प्रभु ।

तूही दाता तूही भ्राता—

तुम्हरी आस करत हम सब हे प्रभु ॥ भव०—

दुख-सागर मे डोलत नइया—

तुमही दाता पार लगैया—

आन फँसी मझधार में नइया—

तुम हो नाथ अनाथ-खेवइया—

झूबत घाय उबारो-हम सबको ०—

(गाते २ जाना—सीन का फटना—समुद्र में जहाज का लंगर पड़ा है—पानी हिलोरे ले रहा है ।)



समुद्र-तट ।

(लक्ष्मी, मोतीलाल और केशव का खड़े हुए दिखाई देना ।)

लक्ष्मी— गाना ।

छाँड़ चले तुम भ्राता किसपर ।

कौन हमारो या जग भ्राता—कैसे रहूँ धीरजधर ॥ छाँड़०—
व्याकुल हृदय कल नहीं पावत—लाख करूँ पर समझ न आवत
त्याग तुम्हारो कठिन कष्टकर चैन नहीं मोहे दमभर ॥ छाँड़०—

मोती०—प्रेम के वशीभूत होकर हमें अपने निरुत्साह से
किसी के उत्साह का खून न करना चाहिये । विष का वह
प्याला जो किसी के वास्ते अमृत हो, न तोड़ना चाहिये ।

दिखाकर अपनी परसन्नता बचालो उसको हानी से ।

जो उत्साह भंग होता है तेरे आँखों के पानी से ॥

उसे दो हर्ष से तुम आज्ञा लण्डन के जाने की ।

करो फिर ईश से तुम निवेदन उसके आने की ॥

लक्ष्मी—यदि यह सत्य है, कि पुरुषों के समान स्त्रियों का
हृदय पाषाण नहीं होता, तो फिर मैं क्योंकर झूठा स्वांग रच
सकती हूँ ? किस हृदय से, किस मुख से भाई को विलायत जाने
की आज्ञा दे सकती हूँ ?



देख कर भाई की सूरत को उमड़ जाता है दिल ।
सुनते ही जाने का शब्द मेरा तो भर आता है दिल ॥

मोती०—प्रिये ! जिस समय मेरी आयु १६ वर्ष की थी और मैं एन्ट्रेन्स की परीक्षा में पास भी नहीं हुआ था, पिता का देहान्त हो गया। एक अनाथ निराधार, न पैसे का जोर, न किसी का आधार, केवल अपने भविष्य भाग्य पर रो रहा था। उस समय प्रेमचन्द ही ने हमारे हाथ में हाथ दिया। हमें दर बंदर की ठोकर खाने से बचाया। हमारी शिक्षा प्राप्ति के लिये हर प्रकार की सहायता दी। आज भोर से उनके उपकारों का ध्यान मेरे हृदय को बेचैन कर रहा है। परन्तु क्या करूँ, उन्हें लंडन जाने से रोकना मानों उनकी उन्नति के मार्ग में ठोकर बनना है। प्यारो ! याद रखो—संसार में सदैव हमें परिस्थिति ही की ओर दृष्टि रखकर चलना चाहिये (प्रेमचन्द का आना)

प्रेम०—कहो भ्राता ! क्या सांच रहे हो ? बहिन लक्ष्मी ! तुम क्यों संकुचित हो ?

मोती०—भाई ! इसकी शंका को समाधान, इसके व्यग्र चित्त को शान्त करने की पूर्णरूप से चेष्टा की, परन्तु इसका चित्त स्थिर नहीं होता—वरन् भयभीत हो रहा है। मेरा हृदय कहता है कि आपके जाने के बाद मुझे वकालत का पेशा छोड़कर इसके समझाने की ही सेवा करनी पड़ेगी। कहो, अब जहाज खुलने में कितना विलम्ब है ?

लक्ष्मी—कितना विलम्ब है और कब जहाज खुलेगा, इसके

पहले भाई प्रेमचन्द, यह बतलाइये कि आप कब और कितने दिनों में वापस आइयेगा ?

प्रेम०—तो क्या आज तक जो मैं कहता आया हूँ वह झूठ है ?

लक्ष्मी—नहीं भाई, ठीक ठीक कहिये आप कितने दिनों में वापस आइयेगा ?

प्रेम०—बहिन ! छः माह या दो वर्ष की अवधितो कहने के लिये है । कारण संकल्प और सिद्धि के मार्ग में ईश्वरेच्छा एक भारी पत्थर है, जिसके आगे एक पग भी बढ़ना असम्भव है । कौन कह सकता है कि मैं दो वर्ष या दो महीने में वापस आऊँगा अथवा जाऊँगा ही नहीं, या जाकर कदाचित् वापस ही न आऊँगा—

संकल्प पूरा हो किसी का ईश्वर के हाथ है ।

आना जाना क्या है यह सब वक्त की एक बात है ॥

मोती०—प्रेमचन्द ! मनुष्य अपनी आत्मशक्ति के जोर से नदी को लांघ सकता है, पहाड़ को तोड़ सकता है और महासागर को पार कर सकता है, परन्तु स्त्री के कोमल हृदय से निकली हुई गंगा-जमुना की जोड़ी जो मनोहर नेत्रों द्वारा होती हुई गाल के गुलाबी-समुद्र में मिलती है, मनुष्य उसको पार करने में असमर्थ है—उसको रोकने में संसार की सारी शक्तियाँ व्यर्थ हैं ।

न जाने क्या असर है स्त्रियों के नेत्र आनी में ।

कि बह जाती हैं सब भीषण नियम एक बूँद पानी में ॥

कहीं नूरी कटोरी से जो वर्षा की झड़ी होगी ।

निरुत्साह हाथ फिर बांधें हुये तेरी खड़ी होगी ॥



प्रेम०—इस हेतु !

मोती०—यदि आपको जाना है, तो Don't say such a silly nonsense; you are a regular mesh of a non-sense. इन शब्दों से इसके दुःखित हृदय को और भी दुःख होगा—जिसको इसका कोमल हृदय सहन नहीं कर सकता। भय है कि कहीं इसके शोक—विलाप से यहाँ हा हाकार न मच जाय और आपका जाना दुर्लभ हो जाय। प्रिये लक्ष्मी ! आनन्द-दायक शब्दों में भाई को जाने की आज्ञा दो।

प्रेम०—बहिन ! इन व्यर्थ की कल्पनाओं से अपने मन को चिन्नातुर न करो। दो वर्ष का समय बातों में गुजर जायगा। ईश्वर ने चाहा, तो डाकूरी की परीक्षा देने के बाद मैं बहुत जल्द वापस आऊँगा।

हम जो जीवित रहे एक बार तो फिर आयेंगे।

बात की बात में दो साल गुजर आयेंगे॥

कल्पना से मन को व्यर्थ में कलपाना है।

आके लण्डन से मुझे हिन्द में फिर आना है॥

लक्ष्मी—भाई ! यह सब सत्य है। परन्तु क्या करूँ मन स्थिर नहीं होता। इस हृदय को लाख समझाती हूँ, परन्तु उसे धैर्य नहीं होता।

प्रेम०—लक्ष्मी ! समय निकट है, आज्ञा दो और आने से प्रथम मेरी टूटी-फुटी जिह्वा से जो शब्द निकलें उनको अपने स्मरण के आखिल में बांध लो। यह मोतीबाल, संसार रूपी समुद्र तल का एक अभ्योल रत्न है। ऐसे रत्न का मिलना कठिन है।



जिस प्रकार मछली के बच्चों को तैरना कोई नहीं सिखाता और वे पैदा होते ही आपही आप पानी में तैरने लगते हैं, उसी प्रकार वकालत के पेशे में यह मोतीलाल है। यह, जीवन-कला की भीड़ को चीरता हुआ अपने सुख और उन्नति के मार्ग को ढूँढ़ रहा है। अतः इस समय उसका उत्साह बढ़ाने वाला अधीरता में धैर्य बंधाने वाला, क्रोधावेश में उसको सम्भालने वाला कोई न कोई मनुष्य उसके पास रहना आवश्यक है। बाल अवस्था से आज तक मैंने उसे अपने पामर शक्ति के बल से सम्भाला, परन्तु आज विलायत जाने से प्रथम उसे तेरे अधीन करता हूँ। अब उसका सुख तेरा सुख, उसका दुख तेरा दुख, उसकी उन्नति तेरा आनन्द, उसकी अवनति तेरा दुर्भाग्य और उसका मंगलोदय तेरा स्वर्ग है।

है पतिपत्नी का सम्बन्ध जैसे कि माली वो बाग ।
है पती घर और पत्नी घर का है रौशन चिराग ॥
नाश दुख को कर बचाओ सुख को यों तुम नाश से ।
नष्ट करता है दीया अन्धेर ज्यों प्रकाश से ॥
केशव—(आकर) भकमारा ।

चढ़ा मस्तूल पर झण्डा मिनट बाकी है अब बारा ।
चलें सरकार जल्दी से अभी सीटी ने भकमारा ॥

प्रेम०—भाई, मोतीलाल ! बहिन लक्ष्मी, प्रणाम ।

केशव—मेरा भी दंडवत है ।

प्रेम०—हा, जो दुख और महाशोक मुझे मेरी माता की मृत्यु के समय हुआ था, आज मैं फिर उसी वेदना से व्यथित हो रहा हूँ। सत्य है, इस मातृभूमि पर सबको एकही प्रेम का अधिकार है। पिता अपनी मिलकीयत का बटवारा करते



समय छोटे-बड़े और लायक-नालायक पुत्र का विचार करता है, परन्तु लायकी और नालायकी का प्रश्न जननी और जन्मभूमी के प्रेम के समय नहीं होता। एक पुत्र ४२ पीढ़ी का नाम डुबाने वाला और दूसरा ४२ पीढ़ी का उद्धार करने वाला होता है, परन्तु अपनी जन्मदायिनी को दोनों एकही हक और एकही अधिकार से यह कहते हैं, कि यह मेरी माता हैं। यही हाल जन्मभूमि का है और इसी लिये कहा है—“जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।” आज भारत के इतिहास में मुझे यह पढ़ कर कितना आनन्द होता है कि ऋषीश्वरों के यज्ञकर्म की जो योगभूमि, श्री गौतम सं महात्मा की जो त्यागभूमि, युधिष्ठिर-अशोक से पुण्यश्लोक लोगों की जो धर्म भूमि है, वही अपनी जन्मभूमि है। जिसकी ओर देखकर श्री छत्रपती शिवाजी ने जितने अधिकार से कहा होगा, कि ये मेरी जन्म-भूमि है, जिसकी ओर देख कर लोक-मान्य तिलकने जितने अधिकार से कहा था, कि यह मेरी जन्म-भूमि है, कल इङ्गलैण्ड से वापस आने के बाद मुझ जैसा पामर भी उतने ही अधिकार से कहेगा कि यह मेरी जन्मभूमि है।

भारतीय सेवक बनें जो प्रेम के सरकार का ।
हाथ बाँधे आये सुख चरणोंमें इस संसार का ॥
जो भला सोचे हैं अपने देश के उद्धार का ।
वह मनुष्य भगवन् है जननी प्रेम के संसार का ॥
धर्म कहते हो जिसे वह अपना अपना कर्म है ।
सच तो यह है देश की सेवाही अपना धर्म है ॥
(जहाज पर सवार होना, जहाज का खुलना)



मकान

(केशव का शराब की बोतल लिये आना)

केशव—हत तेरो दुम में धागा—सुस्ती का देवता
सिर पर पाँव रख कर भागा । सत्य है कि बदमाश को डंडा
चोर को हंटर, अड़ियल घोड़े को चाबुक और शराबी को
शराब का धुरा लगाना चाहिये । भाई ! क्या पूछते हो ? जिस
तरह लकड़ी के आगे मकड़ी नाचती है, उसी तरह शराब
के आगे शराबी ताथय्या का नाच दिखाता है । शराब आलस्य
को हटाती है, आत्मा को प्रफुलित बनाती और शोक को
मिटायी है । यदि संसार में आरोग्य रहना चाहते हो, तो चिंता
रहित जीवन व्यतीत करना चाहते हो, तो ओढ़ना शराब
बिछौना शराब, हँसते शराब, रोते शराब, खाने शराब, पीने
शराब, सारांश कि मृत्यु शराब और जीवन शराब है (शराब की
बोतल का काग खोलना और शराब पीना) बेईमानी ! सरासर
बेईमानी, एकदम बेईमानी । हिन्दुस्तानी हो या बिलायती,
तुर्की हो या अफ़ग़ानी, चीनी हो या जापानी सब में पानी !
रम हो या ओल्डटाम, विस्की हो या हौज ऑफ़लार्ड, व्हाइट
हार्स हो या एकशानं० वन, परन्तु सब में है बेईमानी ! हरे हरे !
इन बेईमानों से कोई पूछता नहीं । दिन दोपहर यह लूटते हैं



किसी को सूझता नहीं। क्या आबकारी वालों ने कपट का वस्त्र धारण कर लिया है, या घूस लेकर संसार को ठगने की प्रतिज्ञा कर ली है? क्या करूँ विवश हूँ? अन्यथा आज ही से इस शराब से असहयोग कर लेता: हरेक पीने वालों को मना कर देता। लोग कहते हैं कि दूध में पानी मिला कर बेचना पाप है। कम तौलना कम देना अधर्म है, परन्तु मैं कहता हूँ कि शराब में पानी मिलाकर बेचना कहां का धर्म है? हत ! तेरी दुम में धागा—इस शराब से तो रहा सहा नशा भी कोसों भागा।

प्रसन्न किस भांति से शराबी प यार हो।

ऐसी शराब से तो नशा भी फरार हो॥

रिश्वत जो लेकर खून जो शराबी का करते हैं।

उन आबकारी वालों पै शैतानों की मार हो॥

चंचला—(प्रवेश कर) लीजिये, आगए पति निम्बट्ट, शराब के टट्टू। करनी न करतूत और बनने को राजा भोज के सपूत। (केशव से) क्यों जी ? मैं कहनी हूँ कि दिन भर शराब ही पीया करोगे या कुछ काम भी करोगे ?

केशव—अन्धी है या तेरी आंखों पर भी बेईमानों की पट्टी चढ़ी है ? देखती नहीं कि कौनसा काम कर रहा हूँ ?

चंचला—हां हां, देख रही हूँ, कि बाप-दादा की मर्यादा को नीलाम कर रहे हो—इस तुच्छ और निष्ठुर वस्तु का पान कर रहे हो।

केशव—अरी मूर्खा ! कोई मन्दिर और शिवाला बना-कर नाम कमाता है। कोई ज्ञान उपदेश देकर अपनी मर्यादा



बढ़ाता है। कोई स्कूल और क्षेत्र खुलवाकर नाम चलाता है। कोई अपने बाहुबल की शक्ति से पराक्रमी गिना जाता है। कोई अपने चोरी की विद्या में निपुण कहलाता है, तो कोई इस संसार में बहुरूपियों का वेप बनाकर—खहर की टोपी धारण कर, देशभक्त कहलाता है। परन्तु मुझ जैसा शराबी जो इन में से किसी गुणों को नहीं जानता, वह यों आठों पहर बोतल पर बोतल लुडका कर शरावियों में उत्तम कहाता है। काम तो नाम से है। चोर हो या डाकू, बुरा हो या भला, मूर्ख हो या पंडित, झानी हो या अज्ञानी, शराबी हो या जुवारी ? जो अपने गुण का उस्ताद है, उसी का नाम संसार में विख्यात है ?

चंचला—क्यों व्यर्थ की बातों में मुझे उलभाते हो, उल्टी सीधी अपने मतलब की समझाते हो। आज दो दो दिवस बीत गये, घर में एक दाना भी नहीं है, तुम्हें कुछ इसका भी ध्यान है ?

केशव—तू भोली है मूर्ख है। अन्न लाकर घर में रखना इन भूखे चूहों का पेट भरना है। कहावत है—“गुरु जी ! ये चेले बहुत हो गये।” उन्होंने कहा,—“भूखे मर्गेंगे आपही रास्ता लेंगे।”

चंचला—परन्तु चूहों के साथ मैं भी तो मर रही हूँ।

केशव—नहीं, तू कभी नहीं मर सकती। अमेरिका के बड़े २ डाकूयों ने सिद्ध किया है, कि मनुष्य १ मास तक विना अन्न के जीवित रह सकता है।



चंचला—तुम्हारे डाकूर जाय चूल्हे-भाड़ में यहाँ उपवास में प्राण पर बन रही है—तुम्हें दिलगी सूझ रही है।

केशव—अच्छा है स्वर्ग पाओगी, वैकुण्ठ में जाओगी, ईश्वर की भक्तिन कहलाओगी।

चंचला—तुम्हें लज्जा नहीं आती, कहीं नाखून के खोदने से महल गिरता है? मन राम-भजन के रूप में तुम्हारी निन्दा कर रहा है।

केशव—वेईमानी, बिल्कुल वेईमानी। मूर्खाने माथा चाट डाला, पर मेरी बातों का अर्थ न जाना। ला, घर में क्या है दे, उसे गिरों रख कर अनाज खरीद लाऊँ।

चंचला—घर में क्या है? कहते हुये नहीं लजाते, अपने बड़ों के चित्र तक तो तुमने बेंचकर शराब पी डाला। उनकी मान-मर्यादा को मिट्टी में मिला डाला, अब क्या रह गया जा लाऊँ; तुम्हारे मुख की कालिख छुड़ाऊँ?

केशव—बेंचूँ नहीं तो क्या शीश चढ़ाऊँ? भूखे रह कर उन्हें गालियाँ सुनवाऊँ? उन्होंने हमें पैदा किया—पालपोस कर बड़ा किया, तो भोजन करने कहाँ जाऊँ? फिर जब आज कल बड़े २ ऋषि-मुनि ब्रह्मा महादेव रामचन्द्र इत्यादि के चित्र दो दो पैसे में बिकते हैं तो मेरे बाप-दादा की अपेक्षा तो वह सस्ते हैं। (बाहर से एक मारवाड़ी का आवाज देना, केशव का घबराना)

मारवाड़ी—केशव, केशव !

केशव—अरे कौन है ! केशव को पुकारने वाला ?

चंचला—होगा कोई रूपया माँगने वाला।

केशव—अररर अब क्या करूँ ? किस तरह इस बनमानुष से प्राण बचाऊँ ? (सोचना) हाँ ठीक है (चंचला से) देखा, मैं बीमार बनजाता हूँ । तुम मेरी हाँ में हाँ मिलाना । खबरदार ! मेरी आज्ञा के विरुद्ध एक पग भी न उठाना । आओ, सेठ जी ! अन्दर आओ ।

रूपचन्द—केशव ! रुपये लिये आज तुमको दस रोज हो गये और तुम मुझ से दो रोज का वादा करके ले आये; अब तक क्यों नहीं दे आये ?

केशव—क्या करूँ सेठ जी, मैं बीमार हो गया । नहीं तो कभी का घर पहुँचा आता । रूपचन्द केशव का हाथ पैर देखकर)

रूप०—हैं ! तुम तो भले-चंगे हो । (हाथ की नाड़ा देखकर) तुमको तो बुखार भी नहीं है—शरीर एकदम ठंडा है ।

केशव—सेठ जी ! आप नहीं जानते हैं । आज कल एक नये ढंग का बुखार चला है, जो कि ऊपर से शरीर को ठंडा रखता है, पर भीतर से बुखार बना है ।

चंचला—हाँ, सेठ जी ! यह इसी ठंड़े बुखार में मर रहे हैं ।

रूपचन्द—अरे मरता है, तो मर जाय, परन्तु मेरा रुपया ता देता जाय ।

चंचला—पर जब यह मरही जाँयगे, तो आपका रुपया किस भाँति दे जाँयगे ? (बाहर से एक पठान का आवाज़ देना)

पठान—कोई है ?

केशव—यह कौन सी आपत्ति आई ? (चंचला का दरवाजे पर जाकर देखना)

चंचला—हे भगवान ! यह तो है सेख पठान ! अब क्या करूँ ?



पठान—(प्रवेश कर) यह मकान किसका है ?

चंचला—आप किसकी खोज कर रहे हैं ?

पठान—केशवगाम—केशवराम ?

चंचला—क्या है काम ?

पठान—हमारे भाई का रुपया बाकी है । हम उसको लेने आया है ।

चंचला—आपका भाई कहाँ गया ?

पठान—देश को । बोलो, इन दोनों में से कौन केशवराम है ? हमको देर होता है ।

चंचला—(स्वगत) बस, यही उपाय ठीक है । इस नयी आपत्ति को इस भाँति ढालना चाहिये—काँटे को काँटे से निकालना चाहिये । अब स्वामी के बदले इस मूर्ख मारवाड़ी को केशवराम बताऊँ और तबेले की बला बन्दर के सर लगाऊँ (पठान से) वह देखो सामने बैठा है, वह बड़ा पाखण्डी है, हर समय भेष बदल रहा है—कभी देशवाली तो कभी मारवाड़ी बनता है ।

पठान— मारवाड़ी के सामने डंडा पटक) क्यों ? रुपया देगा या सम्भालूँ अपना डंडा ?

केशव—(स्वगत) हैं ! यह कौन रामसंडा ? मेरे पिता ! अब तो बिना बुखार के मैं हुआ ठंडा ।

चंचला—(केशव से) धैर्य धरो, मैंने अपने मंत्र से तुम्हारी बला दूसरे के सिर चढ़ाया है—मारवाड़ी का नाम केशवराम बताया है ।

रूपचंद —हाँ साहेब ! किसका रुपया ? कैसा रुपया ?

पठान—किसका रुपया ? हमारा रुपया, हमारे भाई का रुपया—हमारे बाप का रुपया ।

रूपचन्द—भाई साहेब ! तुम भूलते हो । धोखे में दूसरे का कर्जा मेरे सिर मढ़ते हो ।

पठान—तू भूठा है—वेईमान है । (डंडा पटककर) ला रुपया निकाला ?

मारवाडी—भाई ! सभ्यता से बात करो, अपने इस डंडे को हटाओ । तुम्हारा रुपया किसके यहाँ चाहिये, ध्यान से कहो ?

पठान—(कागज़ देख कर) केशवराम के यहाँ ।

रूपचन्द—केशव ? केशव तो इसका नाम है । हमारा नाम तो रूपचन्द है ।

केशव—खाँ साहेब ! यह वेईमान है । केशव इसी का नाम है । यह असत्य का पुतला और वहरूप का खिलौना है । इसका काम कपट के व्योहार और धोखे से ठगना है । अपना देना मेरे भिर लगाता है, आप से भी छल दिखाता है ।

पठान—देता है या निकान्दूँ काबुली लुरा ?

केशव—खाँ साहेब ! आप केवल मुख से कहते हैं या कुछ हाथ-पाँव भी हिलाते हैं ? अड़ियल घोड़े को केवल जिह्वा से न चलाइये—लगाइये दो चार धौल, लगाइये ।

रूपचन्द—अरे बाबा ! अभी तो तू बीमार था, तुझे १०५ डिगरी ठंडा बुखार था—अब यह उलट-फेर ?

केशव—बीमार तू तेरा पिता । मैं क्यों बीमार होने लगा । खाँ साहेब ! सुन रहे हैं, तनिक इसकी दवा कीजिये । इसके सिर पर अपने डंडे का अक्स दीजिये ।

पठान—क्यों जी रुपया कमाने की मशीन चलाऊँ ! अपना मन्त्र जगाऊँ ? अच्छा सम्भल जा । (डंडा तानना)

रूपचन्द—ओ ठहर २ बाबा ! क्यों अपना बुखार मेरे सिर उतारता है ? बोल, कितना रुपया चाहिये ?

पठान—पाँच रुपया मूल, दस रुपया व्याज ।

रूपचन्द—हैं ! मूल से दुगुना व्याज ? क्या हिन्दुस्तान की अपेक्षा तुम्हें और कोई देश लूटने का नहीं मिला ? राम राम ! रुपये पीछे चार आने व्याज ? बाहर के खार्वे दूध मलाई और घर के मांगे भाँख ।

पठान—देता है या करदूँ ठीक ?

केशव—अजी, यह इस तरह नहीं देगा । इसकी मरम्मत बनाओ । इसे ज़रा ठंडी हवा खिलाओ ।

(सबों का मारवाड़ी को मारते हुये ले जाना)

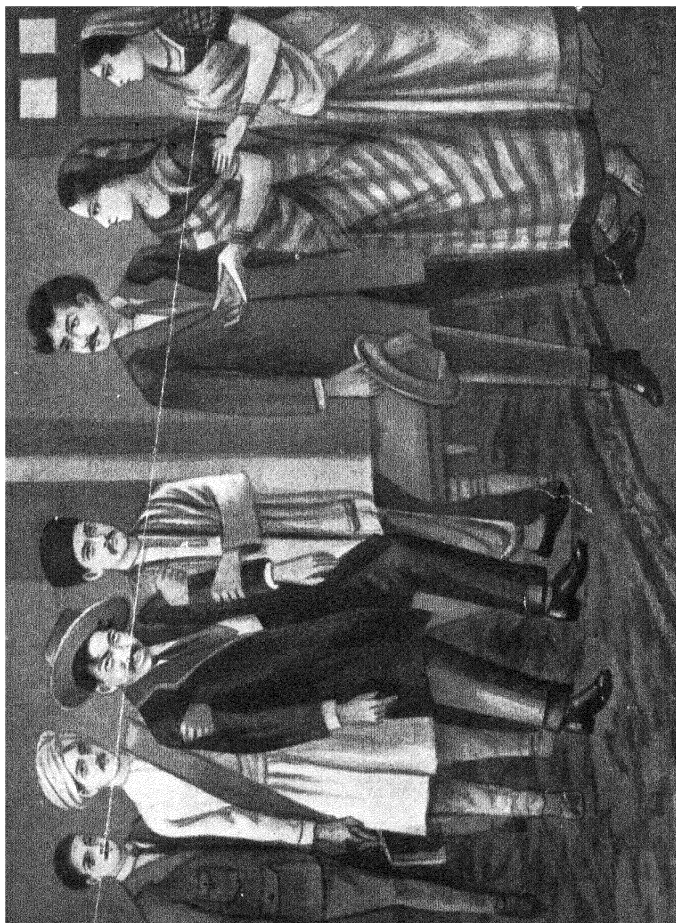




मोतीलाल का मकान

(मोतीलाल का बैठे हुये दिग्वलाई देना)

मोती०—हा ! भरी कचहरी में मुन्सिफ ने केवल इस बात पर कि मैंने क्रोधित होकर वकीलों को बुरा-भला कहा, मेरा अपमान किया । मेरी वकालत की सनद को छ महीने के लिये रद्द कर दिया । आह ! इस अपमान ने मेरे उत्साह और आशाओं को भंग कर दिया । आज, उसी अपमान और अपमान के भय-कर तथा तीव्र शब्द मेरे कानों से उतर कर मेरे हृदय को टुकड़े कर रहे हैं । तलवार के घाव का कष्ट सहन हो सकता है, परन्तु जिह्वा से निकले हुए कृपाण रूपी अपमान के शब्द का घाव सहन नहीं हो सकता । द्रोपदी और दुर्योधन के अपमान से महाभारत का घोर युद्ध हुआ । कुबेर के अपमान ने रावण के वंश का विनाश किया । मानसिंह के अपमान ने महाराणा प्रताप ऐसे वीर को बनों और पहाड़ों में भटकाया । आह ! यही वह अपमान है, जिस से ऐसे २ महान पुरुषों का सर्वनाश हुआ । छोटा हो या बड़ा, राजा हो या रंक, निर्बल हो या सबल सभी इस अपमान से घृणा करते हैं—सभी अपमान का बदला लेने के लिये तय्यार रहते हैं । जो निर्बल है, जिसमें बदला लेने की शक्ति नहीं है, वह संसार के धिक्कार से बचने के लिये आत्महत्या कर डालता है । तो क्या मैं यह अपमानित जीवन व्यतीत करूँगा ? नहीं, कदापि नहीं—





कर दिया चलनी कलेजा शब्द के यों बान से ।
 हो गया जीना मेरा दुर्लभ इस अपमान से ॥
 जिन्दगी कहती है जी, डरता है क्यों अपमान से ।
 और लज्जा कह रही है हाथ धो अब जान से ॥
 मुश्कलों का सामना है कश-मकश में जान है ।
 ऐस जीवन से तो बेहतर मृत्यु ही हरआन है ॥

केशव—(आकर) भखमारा ?

मोती०—कौन केशवराम ?

केशव—भखमारा ! सरकार, चिन्ता न कीजिये दुःख और
 सुख सदैव लगा हो रहता है ।

मोती०—दुख और कष्ट से मैं नहीं डरता । मैं कठिन से कठिन
 आपत्ति को भी सहन कर सकता हूँ, परन्तु इस अपमान और
 अपमान भरे तीव्र शब्द को नहीं सह सकता हूँ ।

केशव—किन्तु चार दिन के बाद जब इस बात को भूल
 जायेंगे तो.....

मोती०—(बात काट कर) केशव ! तुम भूलते हो !! क्या
 यह भूलने की बात है ? इस अपमान का हृदय-विदारक शोक
 मेरे प्राणों के साथ है ।

रात दिन इस कष्ट का हो रहा आघात है ।

आ बनी है जान पर यह दुःख दायक बात है ॥

केशव—भखमारा !

मोती०—संसार कहता है, कि आत्महत्या करना कायरों का
 काम है, परन्तु आत्म हत्या के सिवाय इस चिन्ता से बचने का



क्या उपाय है ? केशव ! क्या कोई ऐसा विष नहीं, जिससे शरीर का नाश न होने पाये और मनुष्य मृतकप्राय हो जाये ?

केशव—ऐसा विष तो नहीं है, परन्तु अमृत मात्र है ! मैं आपके पास इसी हेतु आया हूँ, कि आपको इस घोर चिन्ता से बचाऊँ और उस अमृत रूपी सागर के जल द्वारा आप को आनन्द पहुँचाऊँ । आपके हृदय से इस चिन्ता को दूर कर आपको साहसी बनाऊँ ।

मोती०—ऐसी औषधि ? वह कौन सी औषधि है, जिसमें ऐसा गुण है ?

केशव—यदि श्रीमान् क्रोधित न हों तो उस अमृत का नाम बताऊँ ?

मोती०—हाँ हाँ प्रसन्नता से कहो ।

केशव—उसका नाम है मदिरा । मनुष्य की चिन्ता हरने के लिये—चिन्तातुर हृदय को प्रसन्न करने के लिये यही वह अमृत रूपी औषधि है ।

मोती०—क्या ! शराब ?

केशव—जी हाँ । परन्तु श्रीमान् इस नाम से घबराये क्यों ?

मोती०—केशव ! यह मनुष्य-जीवन की नाशक है ! यह औषधि नहीं मधुर विष है ।

केशव—उनके लिये जो इसे परिमाण से अधिक पीते हैं । आप तो केवल औषधि मात्र पीयेंगे—रोग निवारण के लिये इसे ग्रहण करेंगे । भला, कहीं एक दिन के पीने से यह कोई हानि पहुँचा सकती है ?

सीम के भीतर यह मदिरा हर्ष का सामान है ।

सीम से बाहर जो निकला फिर तो ये विषपान है ॥



इसकी ही क्या बात है होती अति सब में बुरी ।
यदि पीयो अमृत अधिक तो कष्टदायक प्राण है ॥

मोती०—केशवराम ! जगत एक मुख से कहता है, कि जिसने इसे एक बार स्पर्श किया; वह सदैव के लिये इसका दास हुआ ।

उतर कर कंठ के नीचे हृदय को थाम लेती है ।
कि कर्ष चुम्बक की ज्यों लोहे से अपना काम लेती है॥
चिमटती है जिसे संसार में यह जोंक बोतल की ।
नहीं छुटने का जीवन में कदापि नाम लेती है ॥

केशव—भकमारा ! सरकार ! संसार की बुद्धि ने भकमारा ।
अभ्यासी इसका वह होता है जो इसे हर्ष और आनन्द के लिये पीता है । इसका दास वह बनता है जो इसे परिमाण से अधिक और नित्य पीता है:—

जहाँ पर दौर इसका नित्य और दिन-रात होता है ।
वहाँ यह मद्य अपने विष का बेशक बीज बोता है ॥
जगत में ये बहाती है सदा आनन्द की धारा ।
समझ कर जो दवा इसको किसीने इसमें भकमारा ॥

मोती०—सत्य है, मैं भी इस बात को नहीं मानता, कि मनुष्य एक बार इसे पीये और आजन्म इसका दास बन जाये ? परन्तु लक्ष्मी, प्रेमचन्द, इत्यादि का ध्यान ? (सोच कर) जाने दो, इस समय इन बातों का बिचार ही करना व्यर्थ है । केशव, क्या इससे मेरे हृदय को शान्ति मिलेगी ?

केशव—अवश्य ।

मोती०—तो मैं भी इतने निर्बल हृदय वाला नहीं, कि इसका

आदी बनजाऊँ ? संसार को मैं समझा सकता हूँ, परन्तु इस समय अपने को समझाना मुश्किल है । अच्छा केशवराम ! लाओ कहाँ है ? इस चिन्तातुर हृदय को बहलाने—इस यातना की घड़ी को हटाने के लिये मैं सब कुछ करूँगा—गिलास भरो मैं पीऊँगा ।

केशव—यह लीजिये श्रीमान् !

मोती०—परन्तु अधिक न देना ?

केशव—जी नहीं बहुत ही थोड़ा ! केवल एकप्याला—

सुख की चौसर में अब हर बारही पौ बारह है ।

आज सरकार ने मद्य पान में भखमारा है ॥

(मोतीलाल का शराब पीना, परदे का धीरे २ गिरना)

टेबला ।



रामानन्द का मकान ।

(केशव का शराब की बोतल लिये हुये लुड़कते-पुड़कते

धोके से रामानन्द के मकान में प्रवेश)

केशव—भाइयो ! संभलो । आकाश गिरता है—पृथ्वी घूमती है—पर्वत चल रहा है—घरस्वार हवा में उड़ा जा रहा है । (हँसना) हा हा हा ! बाहरे में और बाहरे मेरी शराब । जो तुम न



पीये, उस पर संसार का अजाब । भाइयो ! क्यों हँसते हो ? (गिरना लड़खड़ा कर) घबराओ नहीं, मैं गिरूँगा नहीं । यह तो ज़रा पाँव ने पैतरा बदला है, थक गया था इस हेतु इधर स उधर हो गया है (इधर उधर देख कर) हैं ! यहाँ पर सन्नाटे का भैरो क्यों नाच रहा है ? चंचला किधर गई ? चंचला ! चंचला ! अरे क्या मर गई ? (टाँपो उतार कर खूँटी पर टाँगने जाना, खूँटी न देख कर आश्चर्य करना) हैं ! यहाँ से खूँटी कहाँ गई ? क्या उसके पाँव भी थक गये जो हवाखोरी को चली गई ? (बैठने के लिये चारपाई तलाश करना, चारपाई को न देख कर आश्चर्य करना) हैं ! चारपाई गायब, आलमारी भी नशरद । बेईमानी, बिलकुल बेईमानी । यह क्या ! आज मकान का मकान ही बदल गया ? बेईमानी के भूत ने इनको भी हड़प लिया ?

(रामानन्द का अपनी स्त्री के साथ छेड़छाड़ करते हुये आना)

चंचला—देखो ! बे समय प्रेम की वार्ता अच्छी नहीं । बालक खड़ा देख रहा है ।

रामानन्द—तो क्या हुआ ? यदि हम न पुत्र को प्रेम करना सिखायेंगे तो क्या मुहल्ले के लोग उसे बतायेंगे ?

चंचला—आप को लज्जा नहीं मालूम होती ?

रामानन्द—वाहरी प्रेम पुतली ! ये क्रोध के हाव भाव !

चंचला—देखो, व्यर्थ हठ न करो—छोड़ो मेरा हाथ छोड़ो ?

रामानन्द—प्रिये ! तनिक वही भाव फिर दिखाओ, गले में बाँहें डाल कर छाती से लग जाओ ।

केशव—हैं ! यह कैसी असभ्यता ? मेरे सामने मेरी स्त्री की यह धृष्टता ; यह निर्लज्जता ? बेईमानी—बिलकुल बेईमानी ।



चंचला—कहो, मुझे बनारस की साड़ी लाये ?

रामा०—प्रिये ! कल अवश्य लाऊँगा ।

केशव—हैं ! गैरों से साड़ी मँगाती है—पति की मर्यादा को मिट्टी में मिलाती है ?

चंचला—और वह चोली ?

रामा०—प्यारी ! चोली सिल रही है । अब आओ गले मिलो—चित्त को मलीन न करो ।

केशव—ओफ़ ! इससे अधिक नहीं सुन सकता ।

(चंचला की ओर बढ़ कर) बस खबरदार ?

चंचला—हे भगवान ! यह कौन शैतान !

केशव—ठहर मूर्ख ! बेईमान ! (चंचला के पीछे दौड़ना और सीढ़ी की ठोकर खा कर गिरना, फिर उठ कर रामानन्द को गर्दन पकड़ कर) क्यों बे निर्लज्ज ! तम्बाकू के पिण्डे ! आँखकी कीचड़ ! यह कैसी बेहयाई ?

रामा०—तू कौन है भाई ! एक तो मेरे रंग को भङ्ग करना, उस पर से मेरी गर्दन पकड़ना ? यह ज्यादा तो कि मेरे गृह में जबर्दस्ती घुस आना और मुझे गालियाँ सुनाना ।

केशव—मूर्ख ! मेरी स्त्री को मेरे सामने गले लगाना ?

रामा०—बस, भलाई इसी में है कि बिना एक शब्द कहे यहाँ से चले जाओ । नहीं तो चोरी के जुर्म में दण्ड पाओगे ।

केशव—क्यों ? उलटे चोर कोतवाल को डाटे । साहूकार और डड़वारा डाके । मूर्ख ! तू किस की आज्ञा से मेरे घर में घुस आया ?



रामा०—मैं पूछता हूँ कि तूने किसकी आत्मा से मेरी स्त्री पर हाथ उठाया ?

केशव—स्त्री ? किस की स्त्री ?

रामा०—मेरी स्त्री ।

केशव—तेरी स्त्री ? अबे मेरी स्त्री या तेरी स्त्री ?

रामा०—तेरी स्त्री ? अथवा मेरी स्त्री ?

केशव—मेरी स्त्री ?

रामा०—नहीं, मेरी स्त्री ।

केशव—मैं तेरा सिर फोड़दूँगा ।

रामा०—जिह्वा संभाल, नहीं तो तेरा मुख बिगाड़ दूँगा ।

केशव—अबे बुद्धि की औषधि कर ।

रामा०—तू भी अपने मस्तिष्क की दवा कर ।

केशव—चल हट दूर हो जा ।

रामा०—तू भी मेरे सामने से निकल जा ।

(केशव का रामानन्द को मारना और रामानन्द का चिल्लाते हुये बाहर भाग जाना)

रामानन्द—अरे दौड़ो दौड़ो, इस शराबी ने तो मुझे मार डाला । बेईमानी, स्त्री पुरुष में बेईमानी ? अड़ोस-पड़ोस में बेईमानी ।

केशव—मूर्ख ने मेरी शक्ति न पहचानी । जब मार पड़ी तो हो गया बर्साती पानी । (रामानन्द के लड़के प्रेमशंकर को देख कर आश्चर्य करना) हैं ! यह पुत्र किसका ?

प्रेम०—(आकर) माता ! माता !

केशव—लड़के तू किस को खोज रहा है ?



प्रेमशंकर—अपनी माता को ।

केशव—तेरी माता का नाम ?

प्रेमशंकर—चञ्चला ।

केशव—हैं ! यह स्त्री है या अप्रिकन मशीन । कल तक तो कोई पुत्र न था और आज कहाँ से उत्पन्न हो गया ? बस अभी छुरी लाकर एक ही बार में दोनों का काम समाप्त करता हूँ; इस बेईमानी को अपने घर से दूर करता हूँ ।

(जाना, चञ्चला का अपने पुत्र प्रेम को पुकारते हुये प्रवेश)

चञ्चला—प्रेम ! प्रेम !

प्रेमशंकर—माता जी ! मैं तो तुम्हीं को खोज रहा था ।

चञ्चला—तू यहाँ आ गया और वह शराबी कहाँ गया ?

प्रेम०—अभी अभी बाहर गया और कहता गया है, कि छुरी लाकर दोनों को परलोक पहुँचाऊँगा ।

चञ्चला—हे ईश्वर ! अब क्या करूँ ? तेरे पिता कहाँ गये ?
(रामानन्द का दो पड़ोसियों के साथ आना)

१ पड़ोसी—कहाँ है ? किधर है ? यहाँ तो कोई भी नहीं ।

२ पड़ोसी—देखो, यहीं कहीं छिपा होगा ।

रामा०—कहाँ छिप गये ?

चञ्चला—नाथ ! वह छिपा नहीं है अभी अभी बाहर छुरी लेने गया है । हिन्दुस्तान की पुलिस की भाँति भगड़ा समाप्त हो जाने पर अब तुम लोग भी आकर साहस दिखाते हो ? साँप निकल गया तो चिह्न पर लाठी पीटते हो ?

१ पड़ोसी—अच्छा, चला गया तो चलो भंभट गई । सर की बला टल गई ।



२ प०—साँप भी मर गया और लाठी भी बच गई ।

रामा०—ओ कलंकनी ! यह सब तेरी ही कुचाल का कारण है । आज तेरा प्रिया चरित्र समझ में आया । पर पुरुष के छिपे प्रेम का भेद आज मैंने पाया । चल मेरे सामने से दूर हो ।

चंचला—शिव ! शिव ! नाथ ! आप क्या कह रहे हो ?

रामा०—वही जो प्रत्यक्ष है । यदि वह तुझे नहीं जानता था, तो पराये गृह में कैसे चला आया ? पर स्त्री को कैसे हाथ लगाया ?

चंचला—नाथ ! दीवानों और नशेबाजों का क्या ठिकाना है । जिसके घर में वे चाहते हैं घुस जाते हैं; बिना समझे बूझे लोगों से टण्टा मचाते, गालियाँ सुनाते हैं !

रामा०—यदि तू उसे नहीं जानती थी तो भागी क्यों ?

चंचला—भागती न तो क्या करती ? एक नीच से अपनी मर्यादा उतरवाती ? एक शराबी के मुख लग कर स्वयं मूर्ख कहलाती ?

रामा०—कभी नहीं, कदापि नहीं, अवश्य दाल में कुछ काला है—गड़बड़ भाला है ।

चंचला—भाइयो ! आपही लोग अब इनकी शंका दूर करें—इनके प्रश्न का उत्तर दें ।

२ प०—भाई ! हम लोग तुम्हारे भेद को क्या जान सकते हैं । पति-पत्नी के भगड़े में कुछ नहीं कह सकते हैं ।

चंचला—प्राणनाथ ! व्यर्थ दोषारोपण न करो ? तनिक विचार कर बुद्धि से काम लो । मैं सौगन्ध.....



रामा०—कभी नहीं, कदापि नहीं। तूने अवश्य उससे आंखें लड़ायी थी। इसके प्रथम अवश्य तेरी उसकी नताई थी ?

चंचला—शिव ! शिव ! हे भगवान ! तू अन्तर्यामी है—मैं तेरे आगे अपने सतपन का न्याय चाहती हूँ ।

रामा०—हाँ, अगर इसका प्रायश्चित्त करना चाहे तो एक उपाय है ?

चंचला—वह क्या स्वामी ?

रामा०—केवल दण्ड ?

चंचला—आप मेरे प्रभु हैं, मालिक हैं, जो चाहें दण्ड दे सकते हैं ।

पड़ोसी—हाँ, भाई रामानन्द ! बराबर एक के बदले बीस ले सकते हो ।

रामा०—अच्छा तो इधर आ, आंखें बन्द कर और जो मैं कहता हूँ वह कह ।

चंचला—जो आज्ञा । (चंचला का आकर आंखें बन्द करना)
(पड़ोसियों का जाना रामानन्द का लगातार बीस बोसा लेना ।)

चंचला—हैं हैं ! यह क्या नाथ !

रामा०—वही प्रथम प्रेम का मिलाप ?

गाना

रामा०—प्रेम मिलन का मुख चुम्बन का—

चंचला—यही है मेरा दण्ड विधान ?

रामा०—हाँ हाँ प्राण ?

प्रथम जो तू ने मुझे छुकाया—

इसी हेतु यह ढोंग रचाया—



रङ्ग जमा कर बात बना कर—
 मिथ्या दोष लगाया—दो चुम्बन का दान—हाँ हाँ०—
 चंचला—धन्य हो स्वामी—धन्य है तेरी माया ।
 रामा०—कैसा भोली तुझे बनाया—
 चंचला—है नारी से पति का मान ॥ हाँ हाँ प्राण०—
 (गाते गाते दोनों का जाना)



मोतीलाल का घर

(लक्ष्मी का पालना झुलाते और गाना गाते हुये दिखाई देना ।)

लक्ष्मी—

गाना ।

नारी, जीवन पति प्रेम से ; प्रेम है नारी का आधार ।
 हृदय प्रफुल्लित करता नारी का देता हर्ष अपार ॥ नारी०—
 बिन पतिप्रेम स्वर्ग नरक है बिन पति सूना है संसार ।
 पति प्रेम का एक शब्द हो जाता नारी का शृङ्गार ॥ नारी०—
 मोती०—प्रिये ! यह तुम क्या कहती हो; तुम्हारा यह बिचार
 व्यर्थ है । मैं तुमसे उतना ही प्रेम करता हूँ, जितना कि चकोर
 चन्द्र से, मधुकर पुष्प से, पतंग दीपक से प्रेम करता है ।



चन्द्र मैं तू सूर्य है सौन्दर्य के आकाश की ।

मैं हूँ भिक्षुक तू है रक्षक प्रेम के प्रकाश की ॥

लक्ष्मी—प्राणाधार ! मधुकर, चकोर और पतंग की उपमा किसी समय मेरे योग्य थी, परन्तु अब नहीं ।

मोती०—कारण ?

लक्ष्मी—आपका प्रेम अब कोई दूसरा रूप धारण कर रहा है । प्रेम की पुष्प रूपी वाटिका में अब घृणा का काँटा दिखाई दे रहा है ।

मोती०—अहा ! यह शब्द तेरे अधिक प्रेम के साक्षी हैं । हृदय जिसको प्रेम करता है, उस प्रेमी की तनिक सी असावधानी यदि अज्ञानवश या अनजान में हो जाये, तो प्रेमिका को कल्पना का अवसर दे कर उसे दोषारोपण का पात्र बनाती है । और उसके बिचार की तीव्र शक्ति, उसके हृदय पर विश्वास का मुलम्मा चढ़ाती है ।

लक्ष्मी—मनुष्य का हृदय सत्य-असत्य, मित्र-शत्रु के परखने के लिये एक दर्पण है । जिस प्रकार दर्पण रूपवान को कुरूप और कुरूप को रूपवान नहीं दिखाता है, उसी प्रकार हृदय का दर्पण मित्र को शत्रु और सत्य को असत्य नहीं बताता है ।

मोती०—परन्तु दर्पण रूपी हृदय पर जब बिचार और खोटी कल्पना की मैल है, तो अच्छी से अच्छी सूरत भी धुँधली नज़र आती है । इसलिये कहता हूँ कि हृदय से इस कल्पना को दूर करो । मैं पहले से अधिक प्रेम करता हूँ इस सत्य जानो ।

(टोपी उठा कर बाहर जाने की तयारी करना)



लक्ष्मी—नाथ ! दासी भाई रामलाल के यहाँ गई है, मैं अकेली हूँ; यदि आप इस समय बाहर न जायँगे तो क्या कोई हानि है ?

मोती०—हाँ। मुझे एक महत्वपूर्ण कार्य के लिये बाहर जाना आवश्यक है। सम्भव है आने में विलम्ब हो। अतः तुम भोजन कर लेना, मेरी राह न देखना।

लक्ष्मी - परन्तु कई दिन से मैं देख रही हूँ कि आप घर में भोजन नहीं करते हैं। रात्रि के दो दो बजे तक बाहर रहते हैं। क्या कारण ? मुझे तो प्रताप होता है कि आप मुझसे रुष्ट हैं।

मोती०—क्या कार्य में विलम्ब हो जाने के कारण समय पर न आ सका तो इसका यह अर्थ है ?

लक्ष्मी—प्राणाधार ! इससे प्रथम भोजन तो क्या, यों भी आप कहीं अधिक नहीं ठहरते थे। एक दिन वह था, जब हम एक दूसरे के प्रेम में मुग्ध हो कर हर समय एक दूसरे का स्वरूप देखते रहते और उसके सौन्दर्य की उपासना करते थे। हम लोग की प्रसन्नता को देखकर प्रसन्नता की देवी भी ईर्ष्या करती थी। एक दिन आज है, कि यह दासी भोजन लिये हुये रात्रि में दो दो बजे तक बैठी हुई आपके मुख-दर्शन को तरसती है।

मोती०—लक्ष्मी ! काम की अधिकता से रात्री अधिक बीत जाती है और मित्रों के आग्रह से वहीं भोजन करने के लिये मैं विवश हो जाता हूँ। यही कारण है कि विलम्ब से आता हूँ। कल मेरे मन की अवधि पूरी होने वाली है। चिन्ता न करो। अपने मनोहर नेत्रों से आँसू पोछो। कल से मैं रात्री में कहीं न जाऊँगा। अच्छा मैं जाता हूँ। (जाता)

लक्ष्मी०—हे ईश्वर ! ईश्वर !! मेरा भाग्य मेरा सुख और मेरी मर्यादा तेरे हाथ है । तू संसार का सहायक, दीनबन्धू, दीनानाथ है ।

गाना ।

हे भगवन् ! दासी चरण में आन पड़ी है ॥

दुखका बादल उमड़ रहा है, कष्ट की बिजली चमक रही है ।

नाथ अनाथ को छत्र बनो एक दुखिया भय से विलख रही है ॥

भय है कहीं ये वर्षा नाथ को दुख के जल में भिगोये नहीं ।

डर है कहीं इस घटा टोप में स्वामी सुपथ से खोयें नहीं ।

बिनती 'दासी' यही करत प्रभु ! नाथ को दुख कछु होये नहीं ॥

प्रेमचन्द—(आकर) लक्ष्मी ! यह कैसा सन्ताप, कैसा विलाप ! मोतीलाल कहाँ गये ?

लक्ष्मी—भाई ! वे मेरे प्रार्थना करने पर भी अभी अभी घर से बाहर चले जा रहे हैं ।

प्रेम०—रात्रि की भयङ्करता से भयभीत होकर सूर्य देव अपनी सुनहली किरणों को समेटे हुये पश्चिम दिशा की ओर भागे जा रहे हैं, समय के देवता के कांसे की जिह्वा से, रात्रि के आने की सूचना सुनकर हरेक प्राणी अपने कार्य को समाप्त कर अपने गृह को ओर शीघ्रता पूर्वक लौट रहा है; परन्तु ऐसे समय में घर से निकल कर तुम्हारे रोकने पर भी मोतीलाल कहाँ गया ? क्या सनद रद्द होने के कारण कुछ रुपये पैसों का कष्ट तो नहीं हुआ ? कदाचित् मानवी स्वभाव के कारण मोतीलाल न कहता हो ?

दासी—नहीं, आपकी दया से इन बातों का कोई कष्ट नहीं



है। जिस दिन से सनद रद्द हुई है, मालकिन के पिता जी २००) रुपये माहवार बराबर भेज देते हैं।

लक्ष्मी—आह ! मेरा मन मेरा हृदय मुझसे कहता है, कि अवश्य इसमें कोई भेद छिपा है। रात्रि के दो दो बजे तक बाहर रहना ही हमारे भविष्य दुर्भाग्य की सूचना दे रहा है।

प्रेम०—लक्ष्मी ! तू बुद्धिमान और समझदार है। यह कैसी कल्पना, यह कैसा बिचार ? मनुष्य बेकारी में मन बहलाने के लिये अपने मित्र-मंडलों में चला जाता है। मित्रों के वार्तालाप में अपने कष्ट-चिन्ता को भुलाता है। अतः मोतीलाल भी क्लासफेलों मित्र के घर जाकर इस शोक की घड़ी को दूर करने का प्रयत्न करता होगा। तुम व्यर्थ की चिन्ता न करो। मोतीलाल बुद्धिमान समझदार और ज्ञानी है। वह कोई ऐसा अनर्थ नहीं करेगा जिससे तुम्हें मुझे या उसके धर्म को कोई हानि पहुँचे।

लक्ष्मी—भाई ! आप चाहे जो कुछ कहें, परन्तु मेरे नेत्रों के सामने तो मूर्तिमन्त दुर्भाग्य खड़ा हँस रहा है। मुझे ऐसा जान पड़ता है, कि मेरे भाग्यशाली दिनों और सुख की रात्रियों का अन्त हो रहा है।

आगई है कुछ स्याही सूर्य के प्रकाश पर।

छा रहा है श्यामघन अब भाग के आकाश पर ॥

किस तरह हो धीर मन को किस तरह संतोष हो।

आने वाले जब समय का हम पै ऐसा रोष हो ॥

प्रेम०—बहन ! तुम निश्चिन्त रहो। मैं दो तीन दिवस में इसका पूरा २ पता लगाऊँगा। मोतीलाल कहाँ जाता, क्या



करता और किन मित्रों की संगत में बैठता है, इसका समाचार तुम्हें सुनाऊंगा ।

लक्ष्मी—भाई ! आपही का भरोसा मेरे सिर पर छत्र का साया बनकर मुझे बचाये है ।

प्रेम०—नहीं २ तुम धैर्य धरो, जाओ अपने बच्चे को सुलाओ । अपने हृदय को चिन्तातुर बनाकर व्यर्थ की शंका से मन को न कलपाओ ।

(लक्ष्मी और दासी का जाना-चंचला का आना)

चंचला—श्रीमान ?

प्रेम०—कौन चंचला ? तुमने पुकारा ?

चंचला—हाँ श्रीमान् ! दासी कुछ निवेदन करना चाहती है ?

प्रेम०—कहो, क्या है ?

चंचला—एक दुख दायक संदेश । हृदय को व्याकुल कर देने वाली बात ।

प्रेम०—दुखदायक संदेश ? कोई चिन्ता नहीं ! प्रसन्नता से कहो । मेरा हृदय कोमल नहीं, मैं मोम का नहीं, पत्थर का हृदय रखता हूँ । बुरे से बुरे और भयंकर से भयंकर बात को भी स्थिर भाव से सुन सकता हूँ ।

चंचला—परन्तु बचन दीजिये कि यह बात मालकिन के कानों तक न जायेगी । अन्यथा वह शोक में विह्वल हो जायेंगी ।

प्रेम०—चंचला ! तेरे शब्द मेरे हृदय को व्याकुल कर रहे हैं । शीघ्र कह वह कौनसी बात है जो तू लक्ष्मी से छिपाना चाहती है । कौन सा छिपा भेद है जो मुझे सुनाना चाहती है ।



चंचला—वही जो मुझे न कहना चाहिये । वह जो आपके कानों को न सुनना चाहिये ।

प्रेम०—क्या मोतीलाल ने किसी से झगड़ा किया ?

चंचला—नहीं ।

प्रेम०—किसी का रक्तपात किया ?

चंचला—नहीं ।

प्रेम०—किसी पर अत्याचार किया ?

चंचला—नहीं ।

प्रेम०—किसी की चोरी की ?

चंचला—नहीं ।

प्रेम०—किसी स्त्री के प्रेम में फँस गया ?

चंचला—नहीं ।

प्रेम०—फिर क्या किया ? तेरे टूटे और रुकावट के शब्द मेरे मन को बेचैन कर रहे हैं ?

चंचला—श्रीमान् ! मोती बाबू शराब पीते हैं ।

प्रेम०—क्या मद्यपान !

चंचला—जी, श्रीमान् !

प्रेम०—हे भगवान् ! मोतीलाल और मद्यपान ! कानों, सुनने के प्रथम तुम बहरे हो जाओ । नेत्रों ! इस दृश्य को देखने से प्रथम तुम अंधी हो जाओ । आकाश, उतर आ, पृथ्वी, तू प्रकट हो जा, और मद्य में डूबते हुये एक आर्य्य सन्तान को बचा । आह !

(सर थाम लेता है टेबल)



बाग—मार्ग ।

(केशव का गाते हुये दिखाई देना)

केशव—

गाना ।

वाह वाह मेरी मदिरा—करे आलिंगन तुझको जो—

शोक है उससे दूर खड़ा ॥ वाह०—

तेरी शक्ति का क्या कहना—मुशकिल है चिन्ता का रहना—

कायर को है बीर बनाती—आलसि को है जोश दिलाती—

साया तेरा जिस पै पड़ा ॥ शोक०—

तेरा पुजारी जो है बनता—घर बाहर वह मगन है रहता—

तेरा जादू जिस पै चढ़ा ॥ शोक०—

भक्तमारा, मदिरादेवी ! तेरी कृपा-दृष्टि से आनन्द
ने मेरे द्वार पर भक्तमारा । सत्य है, तेरे मन्दिर में आनन्द लहरें
ले रहा है, सुख तेरे ग्लास रूपी द्वार पर भक्तमार रहा है ।

(जेब में से बोतल निकाल कर मद्यपान करना)

बुरा कहते हैं जो इसको शुमार उनका है पागल में ।

यह दुनिया स्वर्ग है उनको जो बह जाते हैं इस जलमें ॥

बना देता है मस्त आंखों को जिसका एकही प्याला ।

छुपी है ब्रह्म-शक्ति या भरा है नूर बोतल में ॥



(भगीरथ का आना)

भगीरथ—जै रामजी की !

केशव—भल्लभारा । कौन भगीरथ ? कहो कल तुम मंडली में क्यों नहीं आये ?

भगीरथ—भाई ! मैं एक महान कार्य के कारण न आ सका ।

(ग्लास भरकर केशव का भगीरथ को देना)

केशव—भगीरथ ! संसार और संसार के लोग कहते हैं कि मदिरा खराब है, कारण यह आजन्म छुटती नहीं । तो क्या यह बात सत्य है ? नहीं कदापि नहीं । इस संसार में अनेक वस्तुएँ पेसी हैं, जिन्हें मनुष्य अपनाकर नहीं त्याग सकता और उनका छूटना भी असम्भव है । कहो, क्या संसार वाले उसे त्याग देंगे ? तुम विश्व-विद्यालय के एक पदवी-धर हो, तुम्हीं कहो, कि जब एक मनुष्य स्कूल की परीक्षा में पास होकर पदवी अपनाता है, तो क्या पदवी उसे छोड़ देती है ? एक बार स्त्री का पाणी-ग्रहण कर जब मनुष्य विवाह बन्धन में बंध जाता है तो क्या स्त्री उस पति को छोड़ देती है ? अथवा इस भय से लोगों ने विवाह करना छोड़ दिया है ? बोलो, जब पदवी खराब नहीं, स्त्री खराब नहीं, फिर मदिरा कैसे खराब है ?

भगी०—पदवी और स्त्री का परिणाम मदिरा जैसा खराब नहीं होता ।

केशव—तुम नवयुवक हो, ब्रह्मचारी हो, इसलिये तुमको इसका अनुभव नहीं है । परन्तु जिनका विवाह हो गया है उनसे पूछो । इनका परिणाम मदिरा की अपेक्षा बहुत ही खराब है । अंग्रेजी राज्य होने से हमारे इस दुखी भारत



देश में जो जो आपत्तियाँ आई हैं उन में पदवी और प्रेम अग्र-गण्य हैं ।

भगीरथ—वाह वाह ! केशवराम, पदवी और प्रेम को बुरा कहते २ उदात्त प्रेम की ओर भी झुक पड़े ?

केशव—लो एक प्याला और पीयो, जिससे तुम्हारी जिह्वा पर से उदात्त इत्यादि शब्द धुल जाँय । प्रेम क्या हास्यास्पद नहीं है ? (हँसना है) देखो, कविता में कमल, नाटकों में प्रतिकार, संसार में प्रेम, नवजीवन में सुधार और देशभक्ति के लिये स्वार्थ त्याग इत्यादि बातें भख न मारती तो संसार इनका परिहास करने में कदापि चुप न होता ?

भगीरथ—परन्तु प्रथम यह तो कहो कि प्रेम का परिणाम मदिरा की अपेक्षा खराब क्यों हैं ? सुन्दर स्त्रियों के प्रेम के सामने इस मदिरा का क्या जोर चलता है ?

केशव—भखमारा । प्रेम की अपेक्षा मदिरा प्रत्येक बातों में श्रेष्ठ है । प्रेम में राजा भी सेवक बनता है, परन्तु मदिरा से सेवक भी राजा की भाँति स्वतंत्र रहता है । प्रेम भीख माँगना सिखाता है, तो मद्यपान दूसरों को तुच्छ बताता है । प्रेम में चिन्ता होती है, तो मद्यसं कल्पना-शक्ति अटल होती है । प्रेम का क्षणिक आनन्द नेत्रान्मिलन में होता है, किन्तु मनुष्य का स्याई आनन्द मदिरा मिलन से होता है । प्रेम का मारा रात भर जागता है, परन्तु मद्यपी रात-दिन आनन्द से सोता है ।

भगीरथ—परन्तु मदिरा नीति में कैसी है ?

केशव—मद्य, नीति में भी बहुत अच्छी है । कारण मिथ्या-बादी मनुष्य भी मदिरा के प्रभाव से सत्य कहता है । मद्यपी



कभी किसी की चुगली नहीं खाता; कारण कब किसने क्या कहा है, यह उसे याद ही नहीं आता। मद्यपी कभी किसी का विश्वासघात नहीं करता। कारण उसपर स्वयं कोई विश्वास नहीं रखता। लो एक गिलास और पीयो, चलो मंडली में चलो।

भगीरथ—(पीकर) बस भाई, अधिक नहीं !

केशव—केवल एक ही प्याला और सही। (प्रेमचन्द आकर)

प्रेमचन्द—कौन केशवराम और भगीरथ ? आश्चर्य ! अब आड़ में छिप कर इनका कौतुक देखना चाहिये और समय आने पर इनके साथ हो जाना चाहिये।

केशव—भगीरथ ! चलो।

भगीरथ—हाँ, तुम चलो मैं अभी आता हूँ।

केशव—देखो कल की तरह धोका न देना, अवश्य आना।

भगीरथ—अवश्य।

केशव—जै राम ! (जाना। भगीरथ और प्रेमचन्द का मिलन)

भगीरथ—कौन डाक़र साहब ! आपके आने की खबर तो मैं ने सुनी थी। परन्तु लंडन से वापिस लौट आने का कारण मुझे नहीं मालूम हुआ।

प्रेमचन्द—तुम जानते हो, कि लंडन में परीक्षा देने के पश्चात् मैं जर्मन में परीक्षा देने के लिये जाने वाला था। परन्तु जर्मन वार छिड़ जाने के कारण मुझे लंडन ही से वापिस लौट आना पड़ा। भगीरथ ! मैं इस समय तुम्हारे पास एक आवश्यक कार्य के लिये आया हूँ। क्या मैं.....

भगीरथ—कहिये कहिये प्रसन्नता पूर्वक कहिये, वह क्या काम है।



प्रेमचन्द—आज मुझे अपने साथ मदिरा-मंडल में ले चलो। (भगीरथ का कुछ सोचना) मन में कुछ ख्याल न लाओ। मैं सब कुछ जानता हूँ। मैं अकेला ही जाता, परन्तु तुम्हारे साथ रहने से अधिक आनन्द मिलेगा।

भगीरथ—डाक्टर साहब ! आप मद्यपान करते हैं ? मुझे यह विश्वास नहीं होता।

प्रेमचन्द—हाँ मैं पहले नहीं पीता था, परन्तु विदेश की शीत से रक्षा पाने के लिये मुझे इसके सिवा और कोई उपाय दिखाई न पड़ा। इस हेतु मैं इसका थोड़ा २ पान करता हूँ। परन्तु जब से यहाँ आया हूँ तब से बहुत गुप्त रूप से इसका सेवन करता हूँ। बोलो, क्या तुम मुझे ले चलोगे ?

भगीरथ—ले चलने में मुझे कोई आपत्ति तो नहीं है, परन्तु वहाँ की बातें आपको रुचिकर न होंगी।

प्रेमचन्द—रुचिकर की भी एक ही कही। अजी ! इस लुका-चोरी से तुम्हारे साथ जाकर पीना कहीं अच्छा है।

भगीरथ—अच्छा, तो चलिये।

प्रेमचन्द—चलिये।

(दोनों का जाना)





मदिरा-मण्डल ।

(केवशराम, रहीम बल्शा, खुदा बल्शा, पण्डित विष्णुदत्त इत्यादि का अपने २ हाथ में गिलास लिये हुये गाते दिखाई देना)

सब—

गाना

धन्य धन्य यह मदिरा देवी धन्य धन्य यह देश ।
जहाँ किया जन्म है धारण वही लोक सुरेश ॥
भक्त पुजारी इनका बनता राजा और धनेश ।
मुख मण्डल की ज्योति उसके खमके जैसे दिनेश ॥
चिन्तातुर को प्रफुल्ल बनाती हरतीं दुख क्लेश ।
पूजन करना सब मिल यारो यही पूज्य गणेश ॥

केशवराम—ठहरो मित्रो ! मदिरा देवी की पूजा करने से प्रथम इस मदिरा उद्धार मण्डल का नाम-करण करलो । आज तक तो यह मन्दिर बिना नाम का चल रहा था, परन्तु आज से इसका परिचय आर्य-मदिरा-मण्डल के नाम से करो ।

विष्णु०—आर्य मदिरा मण्डल ? ओह ! यह तो आर्य शब्द का दुरुपयोग है । मदिरा जैसी निन्दनीय वस्तु के साथ ऐसे पवित्र शब्द को जोड़ना दुष्प्रयोग है ।

केशव—भूखमारा । पण्डित जी ! जिस प्रकार सत्-संगत के कारण तच्छ से तच्छ मज्ज्य भी महान और सच्च-



रित्र बन जाता है, उसी प्रकार आर्य के पवित्र और शुभ शब्द के साथ रहने से घृणित मदिरा का भी उद्धार हो जायगा। हरेक नगर और हरेक गली में इसका प्रचार हो जायगा। भारत निवासी को मदिरा का आधार होगा। सब जाति को इसके पान करने का अधिकार होगा।

विष्णु०—तो क्या एक बाजारी वेश्या, यदि किसी कारण वश अपने प्रेमी के साथ गृहणी हो जाये, तो वह भी पतिव्रता और सती कहलाये? नहीं, कभी नहीं। अपवित्र वस्तु पवित्र के साथ नहीं मिल सकती—एक नीच जाति कदापि ऊँच नहीं हो सकती !

केशव—परन्तु तुच्छ पुरुष के गालियों से धार्मिक और महात्माओं की महिमा नहीं घटती है। क्षुद्र नदियाँ गङ्गा में सम्मिलित हो कर गङ्गा जल बनती हैं। गङ्गा ऐसी पवित्र धारा में अशुद्ध से अशुद्ध वस्तु भी लीन हो जाता है।

विष्णु०—किन्तु एक ही गन्दी मछली सरोवर को दूषित बनाती है। तुम्हीं कहो, क्या इस निकृष्ट मदिरा पान करने के योग्य आर्य-जाति है ?

केशव—भट्ट जी ! मदिरा बुरी वस्तु नहीं, वरन् हम पीने वालों ने ही इसे बुरा और तुच्छ बनाया है। भरी सभा में परिमाण से अधिक पान कर इसकी मर्यादा को घटाया है। अन्यथा यही एक तीव्र वस्तु ऐसी है, जो राजा महाराजा और पदाधिकारी लोग पान कर अपने को साहसी बनाते हैं। इस सुखकी देवी और विश्रामदायिनी कहते हैं। बड़े दरबार में और साहब बहादुर के यहाँ इसकी पार्टी दी जाती है। भोज



और निमंत्रण में यह मदिरा ही अग्रगण्य मानी जाती है। अतः आज से इसका नाम आर्य-मदिरा-मण्डल रखना चाहिये, भारतवर्ष में सोडे की भाँति इसका भी प्रचार करना चाहिये। सब—वाह ! वाह !!

(सबका मद्य पान करना)

(मोतीलाल का आना)

१ शराबी—कौन वकील साहब ! आइये आइये, पधारिये !

रहीम०—आइये आइये, एक प्याला से अपनी थकावट को मिटाइये।

(रहीम का देना मोतीलाल का लेना)

मोती०—मित्रो ! जरा ठहरिये, बैठने दीजिये, फिर तो.....

खुदा०—अजी, नेक काम में देर कैसी ? बस, शुरू कीजिये पीजिये २।

मोती०—(पीकर) परन्तु भाई ! मुझे तो इतने ही में नशा हो गया। मेरा भेजा हिल गया। अब बस कीजिये।

रहीम०—इस अस बस का नाम न लीजिये—मण्डली का नशा किरकिरा न कीजिये।

खुदा०—अरे लो यार, कल तुम्हें सनद मिलने वाली है।

विष्णु०—तुम हमारे भाई के समान हो, फिर भी हम लोगों का कहना अस्वीकार करते हो ?

मोती०—अच्छा, तो लाओ एक गिलास और दो, परन्तु यह आखिरी दौर है। अब आगे मैं न लूँगा।

विष्णु०—मोतीलाल ! जिन लोगों को तुम मित्र समझते थे, वही लोग तुम्हारी सनद रद्द होने से आज तुम्हारी हँसी उड़ाते हैं।

और सनद के शोक में तुम मद्यपान करने लगे, यह कह कर नगर में तुम्हारी निन्दा करते हैं।

रहीम०—तो कल सनद मिलते ही उन लोगों से पूछा जायगा ?

मोती०—पूछा जायगा और भरी कचहरी में जूतों से एक २ के सर की पूजा की जायगी।

केशव—भल्लमारा ! कल मद्य पान करके कचहरी में जाइये और बनते हुये काम को शीघ्र बनाइये। शत्रु के हृदय को जलाइये और हँसते हुये घर आइये।

मोती०—हाँ हाँ, मद्य पीकर कचहरी जाऊँगा और शत्रु के सामने सिर ऊँचा करके आऊँगा।

रहीम०—जरूर मद्य पीकर जाओ।

विष्णु०—मोतीलाल ! हम तुम्हारे भाई हैं, जान से जान लड़ा देंगे। चिन्ता नहीं, यदि सनद सदैव के लिये रह हो जाये तो भी, हम तुम्हें एक अच्छी जगह नौकर रखवा देंगे। लो वह प्रतिज्ञा का हाथ है। जिस समय, जिस वक्त तुम्हें आवश्यकता हो, जितनी अच्छी नौकरी तुम चाहो हम तुम्हें दिलादेंगे। लो भट्ट जी, खाँ साहब, तुम भी प्रतिज्ञा का हाथ मिलाव।

(सब का हाथ पर हाथ देना और बचन देना)

रहीम०—अब डरने की जरूरत नहीं।

मोती०—अजी डरता कौन है। मैं अभी कचहरी जा सकता हूँ और शत्रुओं को अपनी ठोकर से उड़ा सकता हूँ।

रहीम०—जरूर २ ! आज सब लोग कचहरी के वक्त तक



इस शराब की भेंट चढ़ाओ और मोतीलाल को उसी हालत में सब लोग कचहरी पहुँचाओ ।

सब—जरूर ! जरूर !! जरूर !!!

केशव—भखमारा ।

खुदा०—लीजिये साहब ! (मोतीलाल को शराब देना)

मोती०—नहीं मित्रो ! अब मैं बेसुध हो जाऊँगा ।

रहीम०—अजी मैं जान से जान लड़ाऊँगा ।

मोती०—(मयपान करता हुआ) तो क्या मैं नहीं पी सकता ? मुझे आवश्यकता है, मैं पी सकता हूँ ।

केशव—भखमारा । मोतीलाल ! यह आखिरी घूट हमारा ।

(मोतीलाल का शराब पीकर बेसुध हो जाना प्रेमचन्द और भगीरथ का प्रवेश)

प्रेम०—भगीरथ ! थोड़ी देर यहीं खड़े रहो । जब मंडली रंग में आये तो वहाँ चलो ।

भगीरथ—परन्तु हम लोगों के आने में देर हो गई ?

(एक शराबी का एक शराबी के गले मिलकर रोना)

१ श०—अबे यह रोने की कौन सी घड़ी है ?

२ श०—मुझे ज्यादा चढ़ी है ।

१ श०—फिर क्या करूँ ?

२ श०—मुझे और पिलाओ ?

१ श०—हाँ हाँ लो, और लो । (शराब पीकर १ ले शराबी का फिर रोना) अबे अब क्यों रोता है ?

२ श०—मुझे नशा नहीं होता है ।

केशव०—भखमारा । (खुद पीना)

प्रेम०—भगीरथ ! शराबियों का तमाशा देख रहे हो ? हैं !
तुम मेरी ओर आश्चर्य से क्यों देख रहे हो ?

भगी०—आप तो मद्यपान करने आये थे न ?

प्रेम०—नहीं भगीरथ ! मुझे क्षमा करो । मैं कोई मद्यपी नहीं । मैंने तुम से मिथ्या कहा था । मैं अपने उस मित्र को, जो नगर की शोभा, बुद्धि और ज्ञान रूपी सागर का एक रत्न है, उसे इस मदिरा रूपी कीचड़ से निकालने आया हूँ । मैंने तुमसे असत्य कहा है, अतः तुम मुझे क्षमा करना ।

१ श०—ओह ! यह मदिरा बड़ीही खराब बस्तु है । इसका पीने वाला गली २ भीख माँगता है ।

२ श०—अबे यह क्या कहता है ?

१ श०—मैं सत्य कहता हूँ—मद्य से निषेध करता हूँ ।

२ श०—मद्यपान करता है और फिर उससे निषेध करता है ।

१ श०—जो किया सो किया । अब से मदिरा खराब है मदिरा अशुद्ध और तुच्छ है ।

२ श०—अबे मुख सम्भाल, क्या बक रहा है !

१ श०—मद्य..... है मद्य.....अशुद्ध..... है

२ श०—तीर्थोदकं च वन्हिश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः । मूर्ख ! बहता पानी और अग्नि शुद्ध है । मद्य की प्रचंड मौजें चारों खंड में बह रही हैं और उसमें अग्नि छिपी हुई है । इस हेतु मद्य शुद्ध और महाशुद्ध है । यह बात धर्म-बचन से ही सिद्ध हो रही है ।

१ श०—मद्य पीकर आदमी गाली बकता है, मद्य आपस में झगड़ा कराता है ।



२ श०—तू मूर्ख है, पागल है। मद्य से जन्म की शत्रुता दूर होती है। कारण मद्य में आग और पानी बास करती है।

आपस में फूट इससे हो आश्चर्य बात है।

यह वह दवा है जिससे कि भगड़ा भी मात है ॥

इस फूट शब्द का भी यहाँ रंग कुरंग है।

देखो जगत में आग और पानी का संग है ॥

१ श०—शराब पीकर मनुष्य बड़बड़ाता है; आपे से बाहर हो जाता है।

२ श०—फूट है। शराब पीकर मनुष्य सत्य कहता है। चोरी कपट का छिपा भेद भी वह बताता है।

१ श०—यह असत्य है, मद्य खराब अवश्य है।

२ श०—देख, मैं तेरा सर तोड़ दूंगा !

रहीम०—जाने दो मित्रो ! बस करो । अधिक कहा सुनी को गड़बड़ी में तुम्हारे पाँव फिसल गये । तुम लोग अपने २ मार्ग से टल गये ।

१ श०—सत्य है। हम लोग चूक गये—नशे की तरंग में अपने २ दावे को भूल गये ।

२ श०—फिर से अपने २ दावे पर दृढ़ रह कर बहस करो ।

(दोनों का शराब पीकर रोना)

प्रेम०—भगीरथ ! देखो, मदिरा के अपवित्र जल में लोटने वाले इन कीड़ों को देखो । धर्म, ज्ञान, मान इन से इस समय कोसों दूर हैं । आह ! यह वो तुच्छ और निन्द्य वस्तु है, जिसको मुसलमानो का ईमान हARAM बतलाता है और हिन्दुओं का धर्म इसके पान करने से अष्ट हो जाता है ! देखो ! अगर आँखें

रखते हो, तो इस ब्राह्मण को देखो। जिसने मांस खाकर अपने पवित्र ब्रह्मधर्म को कलंकित बना दिया है। आह ! हिन्दू-जाति की इस अवस्था को देखकर स्वर्ग से युधिष्ठिर इत्यादि धार्मिक देश-भक्त आहि २ चिल्ला रहे हैं।

जिनकी छाती गीता रस और वेद का स्थान है।
उनके कुकर्मों से अब स्वर्ग कम्पाय मान है ॥
धर्म जिनसे कोसो भागे वो हवा औ बू है यह।
नाम के हैं ब्राह्मण पर धर्म के शत्रु हैं यह ॥

भगीरथ—सत्य है। भाई ! तुम्हारा कहना अक्षरशः सत्य है। नित्य इनके साथ मद्यपान करने से मुझे कभी ऐसी कल्पना नहीं हुई। परन्तु आज मालूम हो गया, कि मदिरा क्या है ? धर्म वृक्ष को चीरने के लिये एक आरा है।

प्रेम०—भगीरथ ! देखो इन प्रेतों की दशा देखो और इनके साथ तुम बैठकर मद्यपान करते हो ? छीः छीः ! हतभागे मनुष्य ! तू ऊष्ण रक्त का तरुण है, नीतज्ञ और बुद्धिमान है। तेरे हृदय में हिन्दुत्व का प्राण है। परन्तु तू इस मदिरा नागिनी के प्रेम में लीन होकर अपने स्वदेश के कार्य को, अपने को भूल गया है। उन्नीस सौ मील लम्बा १८ सौ मील चौड़ा, नाना प्रकार की आपत्तियों से घिरा हुआ तेरा स्वदेश ३३ करोड़ मनुष्यों के साथ भराई हुई आवाज से तुझे पुकार रहा है, परन्तु ओ अभाग ! तुझे इस मदिरा शय के सिवा और कुछ सुनाई नहीं दे रहा है। भगीरथ ! यह दीन, हीन, पंगु, अनाथ, भारत-माता दासत्व की जंजीरों में जकड़ी हुई तुम जैसे तरुण बुद्धिमानों के मुँह की ओर लालसा से देख रही है ; किन्तु तुझे मदिरा मार्ग के सिवाय कुछ दिखाई नहीं दे रहा है। आँखें खोलो,



और देखो। इस हतभागी जन्मभूमि की गोद में तुम्हारे कितने भाई अन्न को तरस रहे हैं। दाने-दाने को बिलख रहे हैं। तुम्हारी बहिनें गुलामी की जबर्दस्त पंजे में जकड़ी हुई रुदन कर रही हैं, पर तुम्हारी यह दशा हो रही है? साढे ६ करोड़ मनुष्य द्वार २ के भिक्षुक होकर दर बंदर ठोकें खा रहे हैं। शहि २ चिला रहे हैं, पर तुम्हें जरा भी इनकी खबर नहीं है। ओ कापुरुष! इस मदिरा के तुच्छ जल में डूबने से तो कहीं अच्छा होता यदि तू अपने भाइयों के दुख में डूब जाता। रास्ता भूले हुए अपने भाइयों को सचेत करके अपने जन्मभूमि का सेवक बनाता।

धिकार तेरे बल पर अधिकार है सुनाता।

तुमसे सपूत जिसके हों दर बंदर वो माता ॥

सोते रहोगे कब तक ये ज्ञान मान जागो।

भारत पुकारता है भारत के प्राण जागो ॥

भगीरथ—धन्य है! भगीरथ को पुनर्जन्म देने वाले परमेश्वर! तू धन्य है!! आज से मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, कि मदिरा पीने को कौन कहे स्पर्श भी न करूँगा। आजन्म भारतमाता के दासों का दास होकर तेरे बताये हुये पथ पर खलूँगा।

केशव—भगीरथ! यह क्या बड़बड़ा रहा है? खुदाबकस! भगीरथ को थोड़ासा पिलाओ।

भगीरथ—मित्रो! मेरे वास्ते कष्ट न उठाओ। आज से मैंने तुम्हारी संगत और इस तुच्छ मदिरा को धिक्कारा।

केशव—भ्रूखमारा। यह क्या कहता है?

भगीरथ—जो सत्य है। मैं सो रहा था, निद्रा देवी मेरी सेवा कर रही थी—स्वार्थ का देवूता मुझे पकूा भल रहा था।

आलस्य की देवी मेरे चरण दबा रही थी और मैं मदिरा की खाट पर पड़ा हुआ आनन्द ले रहा था । अकस्मात् जाग्रत के देवता ने आकर मुझे फिर्झोड़ा, मैं जागा और अपने खोये हुये समय के लिये पश्चात्ताप कर रहा हूँ ।

केशव—भगीरथ ! जाग्रत के देवता को मद्य के प्याले में डुबा दे । ले मण्डली के अनुरोध से थोड़ा पीले । अधिक नहीं, केवल एक प्याला पान कर ले ।

भगीरथ—फैंको, लगाओ आग, उड़ा दो यों बूट से ।

चैतन्य हुआ हूँ आज तो मैं एक घूंट से ॥

(प्याले को पटक देना)

शत्रू हमारे धर्म का और मान का है प्याला ।

शत्रू हमारे देश का और ज्ञान का है प्याला ॥

शत्रू हमारे मन का और जान का है प्याला ।

शत्रू हमारे वेद औ पुराण का है प्याला ॥

(सबका आश्चर्य में होना)

टेब्ला ।





मकान

(लक्ष्मी का विलाप करते प्रवेश)

लक्ष्मी—

गाना ।

समय समय की सब बात ॥

अनहोनी की होनी होती-समय प्रबल प्रख्यात ॥ समय०-

समय बुरे पर ज्ञानी जन की बुद्धि भ्रष्ट हो जात ।

समय को व्यर्थ गवाँ कर मूर्ख-हाथ मलत पछतात ॥ समय०-

समय से डूबत रबि शशि तारे-समय से होत प्रभात ।

समय बीत तब चले दिवाकर-समय से आवत रात ॥ समय०-

समय भले पर सभी है अपने पिता पुत्र अरु मात ।

‘दास’ समय पर काम जो आवे वही मित्र अरु तात ॥ समय०-

अहा, मैं प्रेम की पुष्प वाटिका में एक भाग्यशाली वृक्ष थी । प्रेम और सौभाग्य के चन्द्र ने मुझे अपनी किरणों से सींचा । मैं एक सुन्दर और मनोहर फूल से सुशोभित हुई । उस फूल को लिये हुये मैं सौभाग्य के चन्द्र देवता पर बलिहार हो रही थी, कि अकस्मात् एक छाया ने आकर उस चन्द्र को ढक लिया और वह किरणें विलुप्त हो गईं । मैं अंधेरे में भटकनी हुई, उस सुख और आनन्द रूपी किरणों को ढूँढ रही हूँ । चारों ओर उस ज्योतिर्मयी चन्द्रिका की खोज कर रही हूँ ।

(घड़ी की आवाज सुन कर) देखें कौन आया ? प्राणनाथ तो नहीं हैं ? नहीं, वे कहाँ ? आह, एक वह रात्रि थी, जब मैं आभूषणों से सुसज्जित होकर नव वधू बनाई गई ? प्रसन्नता, ऐश्वर्य, सुख यह सब मेरे चारो ओर हाथ बाँधे खड़े रहे। तारागण मेरे सौन्दर्य से लज्जित होकर बार बार लोप होते और फिर देखने की इच्छा से प्रकट होते थे। चन्द्र अपने मधुर मुसकान से बधाइयाँ देता हुआ मुझ पर शीतलता की वर्षा करता था। मैं हर्ष को ठोकर मारती थी और वह मेरे चरणों में शीश भुकाये था। आह ! आज एक यह रात्रि है कि मैं सुख, प्रसन्नता, हर्ष हरेक के आगे प्रार्थना करती हूँ, पर वे क्षण भर के लिये भी मेरी सुधि नहीं लेते हैं।

दासी—(आकर) बहू जी ! आपके मैके से भाई ताराचन्द जी आये हैं।

लक्ष्मी—विजयपुर से ?

दासी—हाँ, श्रीमती !

ताराचन्द—(आकर) बहिन ! प्रणाम।

लक्ष्मी—प्रसन्न रहो। कहो, भ्राता ! सब कुशल तो है ? पिता जी तो अच्छी तरह हैं ?

तारा०—हाँ, सब कुशल मंगल है।

लक्ष्मी—कपड़ा उतारिये, हाथ-मुख धोइये, जल पीजिये।

(प्रेमचन्द का प्रवेश)

लक्ष्मी—भाई प्रेमचन्द ! तुम आ गये ? कहो क्या समाचार लाये ?

प्रेम०—(स्वगत) आह ! परमात्मा क्या अच्छा होता



यदि गत रात्रि की बातें इससे न कहना पड़ता—अथवा मुख से ये शब्द प्रकट होने के प्रथम ही मेरी जिह्वा कट कर गिर जाती ।

लक्ष्मी—भाई ! तुम मौन क्यों हो ? क्या सोच रहे हो ?

है उदासी आपके मुख पै यह क्यों छाई हुई ।

मुझ अभागिन के लिये है क्या खबर आई हुई ॥

प्रेम०—बहन ! शतरञ्ज, चौसर इत्यादि प्रत्येक खेलों में मनुष्य प्रथम शीघ्रता से चाल चलता है, परन्तु ज्यों ज्यों खेल बढ़ता जाता है त्यों त्यों चाल चलने में मनुष्य विलम्ब लगाता है । यही दशा सांसारिक जीवों की है । ज्यों ज्यों मनुष्य आयु में वृद्धि प्राप्त करता है, त्यों त्यों बाल अवस्था के चंचल स्वभाव का परित्याग करता है और इस कष्टमय संसार में क्षण क्षण पर विचार कर पग रखता है ।

लक्ष्मी—भाई ! आप मेरे हृदय को क्यों चिन्तातुर कर रहे हैं ! कृपया सरल और स्पष्ट शब्दों द्वारा मेरे अदृष्ट को सुनाइये । अपने शुभ समाचार से मेरे हृदय की वेदना दूर कीजिये ।

प्रेम०—कल क्या होने वाला है, यह आज यदि मुझे मालूम हो जाय, तो ईश्वरीय माया की प्रबल शक्ति का नाम संसार से मिट जाय । इसी हेतु विधाता ने प्राणी मात्र का भाग्य-चिह्न माथे पर अदृश्य कर रखा है, जो मनुष्य स्वयं देख नहीं सकता है । किन्तु जब उस सर्वशक्तिमान विधाता को उस ललाट लेख के पढ़ने की आवश्यकता होती है, तो वह अपने कपाल के तृतीय नेत्र से उसे अवलोकन करता है ।



अतः हमारा भविष्य क्या है ? कब और किस समय क्या होगा यह कोई नहीं कह सकता ।

लक्ष्मी—आप की इन रहस्यमय बातों से मेरे हृदय में धड़कन हो रही है—आपकी यह कल्पना मुझे एक दुःखदायक समाचार की सूचना दे रही है । इस भूमिका से मुझे प्रतीत होता है कि आप मुझे प्रबोध देकर बहलाना चाहते हैं । किसी दुःखदायी घटना को मेरे हृदय से हटाना चाहते हैं । किन्तु—

बचन देकर गये थे आप पति-संदेश लाने का ।
मेरे स्वामी मेरे ईश्वर की बातों के सुनाने का ॥
मेरे भ्राता मेरे भाई सुनाओ हाल प्रीतम का ।
प्रतीक्षा से है भय दासी को अपने प्राण जाने का ॥

प्रेम०—(स्वगत) हा ! निष्ठुर दैव ! यह कैसे कठोरता का कार्य मेरे हाथ सौंपा ? मदिरा जैसे अमंगल और घृणित शब्द को किस जिह्वा से इस देवी के सन्मुख उच्चारण करूँ ? ईश्वर ! ईश्वर !! तू ने इसके हृदय में मदिरा रूपी वाक्-बाण मारने की अपेक्षा बिष में बुझा हुआ वाण मारने का कार्य मुझे क्यों नहीं दिया ? (लक्ष्मी से) लक्ष्मी ! इस विश्व-संसार में दुःख-सुख हरेक मनुष्य के साथ है । दोष से तो केवल वह परमात्मा रहित है, अन्यथा हरेक प्राणी में कोई न कोई दोष अवश्य है ।

जो मनुष्य पैदा हुआ इस दुःखमय संसार में ।
आ फँसगा उसका जीवन कष्ट पारावार में ॥
दोष गुण इस जग में हैं प्रत्येक प्राणी के लिये ।
है असम्भव इनसे बचना मूर्ख ज्ञानी के लिये ॥



लक्ष्मी—भाई ! यह सब मैं समझती हूँ, कृपया इस आदेश का कष्ट न करें। मेरे स्वामी देव मेरे नाथ क्रिष्ण की संगत में कहाँ रहते हैं यह समाचार सुनाने की दया करें।

प्रेम०—बहन ! तुम्हारा आग्रह मुझे विवश कर रहा है अस्तु धैर्य से सुनो। मोतीलाल जितना ही सुचरित्र और निर्मल आकाश की भांति स्वच्छ हृदय का था उतनाही चरित्रहीन और दूषित बन गया। उसका आदर-सन्मान मान-मर्यादा घृणा से परिवर्तित हो गया। कुसंग में रहकर उसने अपने आपको तुच्छ बना दिया—लोकलज्जा को तिलाञ्जली देकर अपने ऊपर घृणा का वस्त्र धारण कर लिया।

लक्ष्मी—अर्थात् ?

प्रेम०—अर्थात् उसने मद्यपान किया।

लक्ष्मी—हे ईश्वर ! यह मैं क्या सुन रही हूँ ?

प्रेम०—वही जो मेरे नेत्रों ने देखा।

लक्ष्मी—परमात्मा २ त्राहि ! त्राहि !! (बेहोश होना चाहती है, ताराचन्द्र सम्भालता है)

भगीरथ—(आकर) अनर्थ हो गया। भरी कचहरी में मोतीलाल ने नशे की हालत में न्यायालय का अपमान किया। जिस कारण मुंसिफ ने क्रोधित होकर सदैव के लिये मोतीलाल के वकालत की सनद को छीन लिया।

लक्ष्मी—हा दुर्देव ! तूने सर्वनाश किया।

तारा०—बहन ! इस कष्टमय समय में धैर्य से काम लो। विपत की आँधी को बैठ कर गवाँ दो।



(मोतीलाल केशव चपरासी इत्यादि सब नशे की हालत में आते हैं)

मोती०—हैं ! मेरे गृह में कौन रोता है ? सनद चली गई तो इससे क्या होता है ? मैं इस पृथ्वी की धूल से रुपया पैदा कर सकता हूँ—मिट्टी से सुवर्ण निकाल सकता हूँ । केशव ! एक २ को लात मार कर मेरे गृह से बाहर करदो । जूते से इन सब की खबर लो । जाओ मदिरा ले आओ, उस शक्तिदायनी का पान कराओ ।

प्रेम०—केशव ! कुशल इसी में है कि तुम अभी इस गृह के बाहर निकल जाओ और अपना यह काला मुख यहाँ न दिखाओ । याद रखो यदि फिर कभी इस गृह में आओगे तो कठिन से कठिन दण्ड पाओगे ?

केशव—श्रीमान ! मेरा अपराध ?

प्रेम०—अपराध ? ओ चाण्डाल ! तूने एक निर्दोष, पाप रहित मनुष्य को मदिरा का रोग लगा कर रोगी बना दिया , एक सज्जन सुचरित्र पुरुष को मदिरा जैसे तुच्छ और घृणित-वस्तु का पान करना सिखा दिया । तेरे ही कारण आज एक अबला का सर्वनाश हो रहा है—एक दूध पीते नन्हें बालक का भाग्य ठोकर खा रहा है ।

केशव—किन्तु.....

प्रेम०—वस, मैं तेरे विषमय मुख से एक शब्द भी आगे सुनना नहीं चाहता । मेरे नेत्रों से दूर हो जा, अभी इस गृह से निकल जा ।

मोती०—कौन निकालता है ? किसको निकालता है ?

केशव—सरकार ! प्रेमचन्द जी मुझे घर से निकाल रहे हैं और आप को मद्य पिलाने का दोष मुझ पर लगा रहे हैं ।



मोती०—घर मेरा है। अधिकार मेरा है। प्रेमचन्द कहने वाला कौन होता है? जाओ प्रेमचन्द, ताराचन्द! तुम सब मेरे गृह से बाहर निकल जाओ। आओ प्राणप्रिय केशवराम! तुम आनन्द से बैठो।

तारा०—मोतीलाल जी! यह आप क्या कह रहे हैं?

मोती०—जो कह रहा हूँ वह बहुत ठीक है। मेरा मुख क्या देखते हो? अभी कदम उठाओ और दरवाजे के बाहर हो जाओ।

तारा०—छिः छिः! यह तुम्हारा नहीं इस मदिरा का अनर्थ है। सत्य है मद्यपी कुपात्र को समझाना ही व्यर्थ है।

प्रेम०—मोतीलाल! सोचो, विचारो, तुम क्या कह रहे हो? किसे कह रहे हो इन बातों पर ध्यान दो। मद्य के आवेश में आपसे बाहर न हो।

मोती०—मैं विचार कर चुका हूँ, सोच लिया है। बस अभी मेरे घर से बाहर निकल जाओ—अपनी उपस्थिति से मुझे क्रोधित न बनाओ। अन्यथा.....

प्रेम०—अन्यथा क्या?

मोती०—अन्यथा गर्दन पकड़ कर बाहर कर दिये जाओगे, कुत्ते की भाँति ठुकरा दिये जाओगे।

प्रेम०—बस हो चुका। मोतीलाल! मदिरा का अन्त हो चुका।

तारा०—लक्ष्मी! सुन रही हो? ये अपमान के शब्द सुन रही हो? बहन! उठो, अब इस अपमानित गृह में एक क्षण



भी रहना तेरे योग्य नहीं। जो घर कभी तेरे लिये आनन्द निवास था, अब नर्क-बास है।

मोती०—ले जाव ले जाव। इस बला को भी मेरे सन्मुख से हटाव। मुझे अब किसी की भी आवश्यकता नहीं है। मेरी हितैषी सुखदायनी यह देवी है।

(शराब पीता है)

नारा०—लक्ष्मी! क्या विचार रही है? अब इस घर में पानी पीना भी त्याज्य है।

लक्ष्मी—भाई! इस गृह से निकल कर कहाँ जाऊँ? किस का द्वार खटखटाऊँ?

नारा०—इस नरक के बाहर संसार में अनेक स्थान हैं।

लक्ष्मी—भ्राता! तू विद्वान है—बुद्धि रखता है। ज्ञान का दीपक हो कर मुझे प्रकाश पहुंचाने के बदले अन्धकार पहुंचा रहा है? भाई! स्वामी-चरण जहाँ होंगे वहीं हमारा स्वर्ग, वहीं हमारा बैकुण्ठ और वहीं हमारा कैलास है। तुम्हारे चौदह पीढ़ियों के राज्य में रह कर विभव की रानी बनने की अपेक्षा दुर्दैव की दासी बन कर स्वामी के चरणों में रहना, दुःख में दिन व्यतीत करना मेरा धर्म है। नारी के लिये स्वामी-पग से बिलग होकर स्वर्ग भी यदि मिले तो वह नर्क है।

मोती०—(मोतीलाल के चरणों पर शीश धरना, मोतीलाल का ठोकर मारना) Perfidious wretch, get out विश्वास घातिनी खी, निकल जा।

प्रेम०—लक्ष्मी! तू प्रेम में अन्धी हो रही है। अपने प्यार को देख, उसके कुठार को देख।



त्याग दे यह प्रेम नाता इससे सम्बन्ध तोड़ दे ।

आइना यह अन्धा समझ कर बुद्धिकर से फोड़ दे ॥

लक्ष्मी—छोड़ दूँ ? उन पवित्र चरणों को, जिसके सहारे मुझे इस भूलोक में ब्रह्मदेव ने खड़ा किया है । जिसके बन्धन में समाज ने पवित्र मंत्रों द्वारा बाँध दिया है । जो हमारे जीवन का सार, हमारे हृदय की शक्ति, हमारा आत्मबल, हमारे पथ की प्रथम सीढ़ी और हमारे मंगल-कामना का प्रथम आशीर्वाद है । भ्राता ! फिर तुम्हीं कहो, मैं उसका परित्याग कर कहाँ जा सकती हूँ ? किसकी आश्रयित बनकर आपका नाम दीपा सकती हूँ ।

तारा०—मूर्ख ! पुष्प वही सुखकर है जो सुगन्धित हो । वृक्ष वही सार्थक है जो साया पहुँचाये । भोजन वही प्रिय है जो स्वादिष्ट हो । इस लिये अपनी ओर देख—अपनी अवस्था को पहिचान । अपनी मर्यादा का विचार कर, अपने सुख का ध्यान कर । इस विषैले नाग को रेशम की डोर समझ कर पकड़ने की चेष्टा न कर । कांटे को फूल जान कर उसे लेने के लिये हाथ न बढ़ा । इससे बच, अलग हो, यह अमृत नहीं विष है—पुष्पवाटिका नहीं, अग्निकुण्ड है ।

अलग हो दूर हो इससे यह तेरे सुख का बाधक है ।

लौ है, लपट है, आग है जीवन का नाशक है ॥

लक्ष्मी—गुलाब के फूल के साथ कांटा, चन्द्र में धब्बा, सूर्य में गर्मी, विजली में असाधारण चमक और समुद्र में उबार भाटा यही उनके गुणों की गरिमा है । भाई ! न्याय करो, विचारो । मैं बिश्व हूँ, तो ये उसकी शोभा हैं—मैं नेत्र हूँ, तो ये



उसकी तेज हैं। मैं आकाश हूँ तो ये उसमें सूर्य हैं, मैं पुष्प हूँ, तो ये उसमें सुगन्ध हैं—मैं चन्द्रिका हूँ—तो ये उसके चन्द्र हैं।

मेरी शोभा इन्हीं से है और इनका सुख मेरा सुख है।
जो रूढ़ हों ये चरण मुझसे तो मुझको सुख में भी दुःख है ॥
पती भक्ति की ये शिक्षा सती सीता ने दी मुझको।
पति इच्छा से भूमि स्वर्ग है बनवास की मुझको ॥

तारा०—लक्ष्मी ! क्यों जान-बूझ कर अग्नि में कूद रही हैं ? नेत्र रहते क्यों दुःख के अन्ध कूप में गिर रही हैं। जब यह पति अपने धर्म कर्म को भूल गया, तो तू क्यों पत्नी धर्म का पालन कर रही हैं ? क्यों एक निर्लज्ज शराबी आवारा के साथ मृत्यु का ग्रास बन रही है ?

लक्ष्मी—बस, चुप रहो। भाई ! इसके आगे एक भी अप-शब्द स्वामी के प्रति अपने मुख से न निकालो। मैं अपने पति के सम्बन्ध में कोई वाक्य अपमान सूचक सुनना नहीं चाहती। पतिव्रता स्त्रियों के लिये सिवा स्वामी के माता-पिता भाई इस जग में और कोई नहीं। पतिव्रता में नाता नहीं होता। वह पिता की पुत्री, भाई की बहिन और बालक की माता नहीं होती। वह केवल देव ब्राह्मणों के दिये हुये पति देव की अर्द्धांगनी हैं। जिस दिन मेरा विवाह हुआ, उसी दिन से जानो तुम्हारी बहन मर गई और उसने अपने पति के गृह दूसरे नाम से जनम लिया। बालिका के लगन के समारम्भ में माता-पिता को सुख मालूम होता है; परन्तु इसका उन्हें ध्यान नहीं कि पुत्री का विवाह सम्बन्ध क्या है ? विवाह, कन्याओं



की उत्तरी क्रिया है। विवाह के समय पिता, बालिकाओं के पति के हाथ पर जल नहीं डालता, वरन् अपनी पुत्री को तिलांजलि देता है।

मोती०—लक्ष्मी ! यदि तुझे मेरे साथ रहना है, तो आज से इन दुष्टों को त्याग दे। इनका धन-दौलत, बस्त्राभूषण इत्यादि सब को विष समझ कर ठोकर मार दे। इनके स्पर्श से हाथ खींच—इनके प्रेम से मुख मोड़ ले। इन्हें अपना परम शत्रु समझ कर इन्हें सदैव के लिये छोड़ दे। न इनका मुख देख न इनके घर जा, जीवन पर्यन्त इन्हें अपने यहाँ न बुला।

लक्ष्मी—स्वीकार है। प्राणनाथ ! मुझे यह सब स्वीकार है।

केशव—सरकार ! इस स्वीकृत पर विश्वास न करिये इससे शपथ ले लीजिये।

लक्ष्मी—हाँ हाँ शपथ लेलो; मुझे प्रतिज्ञा-वद्ध करा लो।

केशव—हाँ, श्रीमान् ! अब इस युग में स्त्रियों का विश्वास नहीं। मैं तीन बार चिल्ला कर कहता हूँ कि शपथ ले लो शपथ ले लो।

लक्ष्मी—प्राणनाथ ! मैं आप के चरणों की सौगन्ध खाकर, देवताओं को साक्षी देकर शपथ करती हूँ कि संसार के सारे कष्ट उठाऊँगी—दुःख विपत्ति की बेड़ियाँ पहन कर गली २ भिक्षाटन करूँगी, परन्तु इन लोगों का पैसा क्या, एक तिनका भी ग्रहण न करूँगी।

प्रेम०—लक्ष्मी ! यह तू क्या कर रही है ? प्रेम और मोह में बावली न बन। अपने हाथ से अपने पाँव पर कुल्हाड़ी न मार। धन कुबेर पिता, लक्षाधीश भाई और सुन्दर भयन के रहते हुये गली २ ठोकर खाने की प्रतिज्ञा न कर।



लक्ष्मी—भाई प्रेमचन्द ! उस स्त्री के लिये सुन्दर भवन अमूल्य वस्तु, स्वादिष्ट भोजन, चमकीले आभूषण, निकृष्ट और तुच्छ है जिसके हृदय में पतिप्रेम का, पतिसंवा का दीपक न जगमगा रहा हो ! उसके लिये संसार का उत्तम से उत्तम पदार्थ भी घृणा के योग्य हैं, जिसके हृदय में पातिव्रत का अन्धेरा छा रहा हो । नेत्र हीन पुरुष को मनोहर से मनोहर दृश्य में बिठाने से क्या लाभ हो सकता है, जो न देख सकता हो । एक बहरे को वीणा की झंकार क्या लाभ पहुँचा सकती है, जो कि सुनने की शक्ति न रखता हो ? धन, सम्पत्ति, ऐश्वर्य यह सब श्मशान के दीपक हैं यदि पति पर स्त्री की पति-भक्ति न हो । सौन्दर्य, मनोहरता लावण्य चिता-धूम है यदि स्त्री में पातिव्रत न हो । स्त्री का आभूषण उसकी पवित्रता है । उसका वस्त्र उसकी पतिपरायणता है । उसका शृंगार उसका पति है । इस हेतु मुझे क्षमा करो, मेरी नौका को मेरे भाग्य के सहारे छोड़ दो ।

मांती०—हैं ! तू फिर इन दुष्टों से बातें कर रही है ? और ये चांडाल यहाँ खड़े हैं । बस, अभी इन्हें मेरे सन्मुख से निकाल !

लक्ष्मी—भाई ! अपराध क्षमा करना । आज से यह समझना कि तुम्हारी बहिन मर गई । मेरी अन्तिम प्रार्थना तुम लोगों से यही है मुझे अपने हृदय से बिसार दो, आज से मुझे और इस गृह को अपने हृदय से भुला दो । जाओ ।

मोती०—केशव ! लाओ—मदिरा देवी को लाओ ।

केशव—सरकार ! अब कहाँ है ? केवल बचा हुआ यह 'एक प्याला' है ।

(सबका शोक में जाना मोतीलाल का मदिरा पीना और क्रोध से देखना)
टेग्ला डाप



लक्ष्मी की भोपड़ी ।

(एक भोपड़ी के बाहरी हिस्से में लक्ष्मी अपने बच्चे को लिये बैठी है)

गाना

विपदा कौन हरे मोरी तुम बिन नाथ ।

बिनती करत कर जोरी—हे यदुनाथ ॥ विपदा०—

पग पग पर प्रभू संकट आवत-कल्पित मन को है कल्पावत ।

आश चरण को मांहे तोरी-हे रघुनाथ ॥ बिनती०—
कुसमय ने है नाथ को छीना-विपति ने आकर निधन कीन्हा ।

अब बिन दुर्गति हुई यह मेरी हे विश्वनाथ ॥

बिजली चमकने के पश्चात् शान्त होती है—मेघ वर्षा करने के बाद खुलता है, सूर्य अस्त होने के बाद उदय होता और चन्द्र घटने के बाद बढ़ता है । जगत में हरेक रात्रि के बाद प्रातःकाल है, परन्तु इस हतभागिनी के जीवन का न तो प्रातःकाल है और न सायंकाल है । केवल दुःख और कष्टों से आँसू बहाना, विलाप और पश्चात्ताप में जीवन बिताना । बच्चा बिलख रहा है, शरीर बिना अन्न-जल के शून्य हो रहा है । शक्ति क्षीण और हृदय विदाँण हो रहा है । क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? किस प्रकार अपना जीवन निर्वाह करूँ ? भगवान ! क्या मेरी दरिद्रता का अन्त न होगा ? क्या मेरे दुखों का काली



घटा विच्छिन्न न होगी ? क्या मेरे आनन्द का प्रभात न होगा ?
दीनबन्धू दीनानाथ ! आप दया के अबतार हो, करुणा के सागर
हो । देखो, देखो, इस बालक की दशा निहारो इस अभागिनी
की अवस्था पर बिचार करो । नौका डूब रही है दुख-सागर
से पार करो ।

गाना ।

बेगि पधारो दीनानाथ ।

दुख का सागर उमड़ रहा है विपद भँवर का घुमड़ रहा है ।
तुमही सहायक नाथ अनाथ ॥ बेगि०—

नाविक मदके तरंग में सोये कोई जतन नहीं सुभक्त मोहे—
चरण शरण में अवला रोये तारो भव से हे रघुनाथ ॥

प्रेम०—(प्रवेशकर) बहन लक्ष्मी यह क्या दशा है ?

लक्ष्मी—कौन भाई प्रेमचन्द तुम और यहां ?

प्रेम०—हाँ, मैं तुम्हारे माता पिता के आग्रह से तुम्हारी
सहायता के लिये आया हूँ । यह इनके दिये हुये द्रव्य तुम्हें देने
को लाया हूँ ।

लक्ष्मी—भाई ! गंगा की बहती हुई धारा को रोकने की
चेष्टा न करो, अपने चादर की ओट से सूर्य के प्रकाश को
ढाकने का प्रयत्न न करो ।

प्रेम०—लक्ष्मी ! तेरे माता-पिता तेरी दुख-गाथा को
सुनकर बहुत दुखित हैं । तेरे इस असहनीय कष्ट और दरिद्रता
के संदेश ने उनको रोगी बना दिया । अतः बहन, हठ न करो—
उनके आर्घेगपूर्ण दान का निरादर न करो । लो, इस द्रव्य को
प्रसन्नता से अपनाओ । वे इसके बदले में तुम से धन्यवाद-संवा



पारितोषिक कुछ नहीं चाहते—केवल तू आनन्द और सुख में अपने जीवन व्यतीत करे इसी में वे सन्तुष्ट हैं।

लक्ष्मी—यह सब सत्य है। परन्तु गर्मी में नदी अपना बहाव नहीं बदलती—पतझड़ में लता वृक्ष को नहीं त्यागती, तो फिर मैं इन जड़ वस्तुओं से हीन होकर, श्रेष्ठ मनुष्य जाति कहला कर दुख में अपने पति को कैसे छोड़ सकती हूँ ? पति—आज्ञा उल्लंघन करके माता-पिता का दिया हुआ द्रव्य अपना कर क्या मैं फिर पतिव्रता कहला सकती हूँ ?

प्रेम०—बहन ! अपनी अवस्था पर नहीं तो इस बालक की दशा पर दया करो।

लक्ष्मी—भ्राता ! यह दया नहीं किन्तु, पति—आज्ञा की अवहेलना है। अपने पतिव्रत को कलुषित करना है।

प्रेम०—तेरा भ्रम है। बालक से बढ़ कर संसार में कोई वस्तु नहीं।

लक्ष्मी—नहीं, पति के आगे एक बालक क्या दस बालक भी कोई चीज नहीं।

प्रेम०—देख विचार कर सोंच ! यह तेरा कथन तेरे लिये दुखदाई है, इसका परिणाम बड़ाही भयंकर है।

लक्ष्मी—मैंने सब सोच लिया है।

प्रेमचन्द—तू मूर्ख है, तेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। तू अपने हाथ से अपना गृह जला रही है। पछताएंगी।

लक्ष्मी—नहीं भ्राता ! वरन् आनन्द और यश रूपी समुद्र की तरंग मेरे द्वार पर लहरा रही है।

प्रेम०—तू कष्ट और दुखों की आखेट हो जायेगी।



लक्ष्मी—दासी उसी में हर्ष मनायेगी ।

प्रेम०—लक्ष्मी २ ! देख समय हाथ में है, सुख तेरे द्वार पर हाथ बांधे खड़ा है । यदि तू अपने हठ को त्याग दे, तो हर्ष और आनन्द तुझे अपनी गोद में लेने के लिये तय्यार है ।

लक्ष्मी—परन्तु वह सुख और आनन्द उस स्वर्गीय भवन की भाँति है, जो सुन्दर और अमूल्य वस्तुओं से सुशोभित होने पर भी एक भयंकर गुफा की भाँति अंधकार है ।

काटकर मैंने जो सुख पाया पति की बात का ।

धिक है ऐसे सुख को और धिक्कार मेरी जात को ॥

प्रेम०—तो मैं वापस चला जाऊँ ?

लक्ष्मी—मैं विवश हूँ ।

प्रेम०—देख लक्ष्मी, मेरे वापस जाने के प्रथम एकबार फिर अपने भविष्य का ध्यान कर ले ।

लक्ष्मी—मुझे पूर्ण रूप से ध्यान है ।

प्रेम०—यह वाक्य ! अच्छा यदि अग्नि को तू स्वयं घी देकर प्रज्वलित कर रही है तो उसे कौन बुझा सकता है ? जब तेरी यही इच्छा है कि तू दुख-सागर में डूब जाये तो तुझे कौन बचा सकता है ? परन्तु ध्यान रख तेरे माता-पिता को यह सुनकर महान दुख होगा कि तू उनकी दी हुई वस्तु का निरादर कर रही है; इस वृद्धावस्था में उनका अपमान और उनकी आशा का रक्तपात कर रही है ।

(जाना)

लक्ष्मी—ठहर २ भाई ! तनिक ठहर । हैं ! यह मेरे हृदय को क्या हो गया ? कौन मेरे मन को अपनी ओर खींच रहा है ?



माता पिता का प्रेम क्यों मेरी बुद्धि का नाश कर रहा है ? दूर हो-दूर हो ! ऐ संसार के मिथ्या प्रेम ! दूर हो । क्यों मुझे भ्रम में डालकर भुलावा दे रहा है ? क्यों मुझे नर्क में गिरा रहा है ? सत्य रूपी नौका प्रेम-नदी में बह रही है, मोह रूपी मल्लाह बुद्धि से बिचारता है इस पार चलना है या उस पार ? इस पार पति-प्रेम और उस पार पितृ प्रेम है । मैं सोच रही हूँ किधर जाऊँ ? पति की ओर धर्म, पितृ की ओर स्नेह है—मैं किस का पक्ष ग्रहण करूँ ? धर्म का या स्नेह का ? ज्ञान कहता है धर्म का प्रेम कहता है स्नेह का । छी: छी: प्रेम ! मिथ्या प्रेम ! क्यों मुझे नर्क की ओर खींच रहा है ? ओ सतियों की मर्यादा ! ओ पातिव्रत धर्म के रक्षक ! आ आ, मेरे दर्पण रूपी हृदय से माता-पिता के प्रेममयी चित्रों को मिटा कर पतिदेव की मूर्ति को विराजमान कर ।

मोती०—(नशे में प्रवेश) लुच्ची, पाजी ! लक्ष्मी !

लक्ष्मी—प्राणनाथ ! क्या आज्ञा है ?

मोती०—आज्ञा ? आज्ञा पूछती है ? ला, तेरे पास क्या है ?

लक्ष्मी—प्राणेश्वर ! वस्त्र-आभूषण इत्यादि जो कुछ था वह तो सब आप ले गये । अब मेरे पास सिवा इस फटे और मलीन वस्त्र के क्या है ? केवल यह गला हुआ शरीर और यह हाड चाम बचा है ।

मोती०—शरीर की बच्ची, यह सब मैं कुछ नहीं जानता । मुझे तो पैसा चाहिये । यदि पैसा न हो तो कोई ऐसी वस्तु दे जिसे बेचकर मैं मद्यपान करूँ ?

लक्ष्मी—प्राणेश ! मैंने कब आप से छिपाया है । जो वस्तुएं थीं सब आप को दे दीं । अब तो सिवा उपवास के

और कुछ नहीं है। पैसा न होने के कारण बालक भोर से बिना दूध के वेसुध पड़ा है।

मोती०—नहीं, तेरे पास है तू मुझ से छिपाती है।

लक्ष्मी—प्राणनाथ ! मैं आप का किस प्रकार विश्वास दिलाऊँ ?

मोती०—तो नहीं है ?

लक्ष्मी—नहीं, प्राणनाथ ! सत्य कहती हूँ। एक पाई भी नहीं है।

मोती०—प्राणनाथ की बच्ची ! यह गले में क्या है ?

लक्ष्मी—यह ?

मोती०—हाँ, यह।

लक्ष्मी—प्रभो ! यह मेरे सौभाग्य का चिन्ह है। आपके नाम का मंगल-सूत्र है। यही जगत में स्त्रियों के लिये एक वस्तु है जिससे स्त्रियाँ सौभाग्यवती कहलाती हैं ?

मोती०—मूर्खा ! सौभाग्य के लिये सोने के मणि की आवश्यकता नहीं केवल सूत्र ही काफी है। बस उसे ला, इधर दे, मेरा नशा हरण हो रहा है।

लक्ष्मी—प्राणनाथ ! लोग.....

मोती०—लोग ? क्या लगाया है ? बोल, देती है या नहीं ?

लक्ष्मी—प्रभो !.....

मोती०—कम्बख्त ! तू यो नहीं, तो यों देगी।

(जबर्दस्ती गले से तोड़ लेता है लक्ष्मी बेहोश हो जाती है)

टेब्ला



मकान ।

(केशव का मकान, चंचला का गाते हुये आना)

गाना ।

एरी दर्ई कैसे बिताऊँ मैं जीवन—
 निष्ठुर पिया से पाला पड़ा है ॥ एरी०—
 मद्य में चूर रहे मिथ्या भरपूर रहे—
 भूठी २ बातों से भाँसे बताये ।
 घर में नहीं दाने, आता है खाने—
 मदिरा को मुख से लगाये ।
 पैसे का लाला पड़ा है ॥ एरी०—

भाग्य की हेठी, प्रारब्ध खोटी, ऐसे शराबी के साथ ब्याही गई कि पेट भर अन्न भी घर में नहीं। मूआ! दिन भर शराब की भट्टी में पड़ा रहता है—आठो पहर नशे में चूर रहता है। हे भगवान! जीवन बीतें तो क्योंकर? निर्वाह हो तो क्योंकर? दो दो दिन उपवास में कटता है। न कहीं जाता है न कुछ कार्य करता है। परमात्मा! मेरे तो नाक में दम रहता है। प्रति-दिवस मिथ्या बातों की गप हाँकता है, हर समय नशे में बंद हवास रहता है। (केशव का छुरा लिये हुये आना)

केशव—बस, एकही बार मैं जीवन की समाप्ति ।



चंचला—यह लीजिये ! पिशाच रूपी देवता आ गये ।
(केशव से) यह तुम क्या बक रहे हो ? यह कैसा उन्माद है ?
यदि कोई गुप्तचर-कर्मचारी सुन लेगा, तो दफा ५२ से बड़े घर
की तीर्थ यात्रा करायेगा । फिर यह छुरा का चमकाना भूल
जायेगा । कहो इसे क्यों लिये हो ?

केशव—एक बकरी को पातिव्रत धर्म पर बलिदान देने
के लिये ।

चंचला—क्या आज परिमान से अधिक पान कर गये
हो ? जो अपने को भूल गये हो ?

केशव—हाँ । हाँ । अधिक पीकर आया हूँ, वरन् तेरे पाप
का प्रायश्चित्त बन कर आया हूँ ।

चंचला—मेरे पाप का प्रायश्चित्त ? मैंने कौन सा पाप किया ?

केशव—कुछ नहीं, मैंने क्या देखा है ? तू तो सती अनुसूय
की अवतार है—पातिव्रत धर्म की भंडार है ।

चंचला—यह क्या ? प्रश्न कुछ और उत्तर कुछ देते हो ।
जब मद्य में अचेत आते हो, तो एक नवीन उत्पात मचाते हो ।
लो मैं जाती हूँ ।

केशव—ठहर, जाती कहाँ है ?

चंचला—जाऊँ न तो क्या तुम्हारी गालियाँ सुनूँ ? भूखी
मरती हूँ, तो क्या गालियों से पेट भरूँ ?

केशव—गालियों से नहीं मैं—तेरी पेट पूजा इस छूरे से
करूँगा ।

चंचला—क्यों ? किस लिये ?

केशव—जिस लिये लक्ष्मण जी ने शूर्पनखा के साथ किया
था । उथेलो ने अपनी पत्नी के साथ किया था ।



चंचला—किस अपराध पर ?

केशव—अपराध ! ओ निर्लज्ज ! तुझे अपराध पूछते लज्जा नहीं आती ? अपना कलुषित मुख मुझे दिखा कर ढिठाई से बातें बनाती है । चुल्लू भर पानी में डूब कर मरे नहीं जाती है ।

चंचला—देखो, तनिक जिह्वा को लगाम दो—शान्ति से काम लो ।

केशव—नहीं तो क्या करेगी ?

चंचला—तुम्हारे नाम पर झुलसा लगाऊँगी—तुम्हारे घर से चली जाऊँगी ।

केशव—यह तो मैं भी समझता हूँ और इसी लिये तो यह काबुली छुरे से तुझे सुर पुर भेजता हूँ ।

चंचला—तो क्या मुझे मारोगे ?

केशव—नहीं तो क्या ? तुझे दूसरों से आँख लड़ाने के लिये छोड़ दूँगा ?

चंचला—यह क्या कहते हो ? होश की औषधि करो अपने हाथों से अपनी मर्यादा न डुबाओ । मैंने किसे बुलाया ? किससे प्रेम जताया ?

केशव—अभी किस से बनारस की साड़ी मंगवा रही थी ? किससे जाली दार चोली को कह रही थी ?

चंचला—बनारस की साड़ी ? जाली दार चोली ? तुम जाग्रित हो या निद्रा में स्वप्न देख रहे हो ? यह सब किस पर दोषारोपण कर रहे हो ?

केशव—अच्छा, वह लड़का किसका था ?

चंचला—लड़का ?

केशव—हाँ, लड़का और चार पांच वर्ष का ।

चंचला—यह कैसी बहकी २ बातें कर रहे हो ? आज तुम्हें क्या हो गया है । क्या अधिक मद्यपान से मस्तिष्क घूम गया है ?

केशव—अरी ! क्यों त्रिया चरित्र कर रही है ? चल, मरने के लिये तैयार हो जा ।

चंचला— (स्वगत) हे भगवान ! यह तो बेतरह प्राण लेने को उद्यत है । किसी के बहकावे में पड़ कर मिथ्या दोषारोपण कर रहा है । काबूली लुरे से मेरा पोषण कर रहा है । (प्रगट) प्रभू ! मैं सौगन्ध.....

केशव—मैं सौगन्ध औगन्ध कुछ नहीं सुनना चाहता चल

चंचला—हे भगवान ! अब क्या करूँ ? यह तो सचमुच मुझे मृत्यु के हवाले कर रहा है । बिना अपराध मेरा जीवन ले रहा है । अरे कोई दौड़ो, मुझे बचाओ (केशव का चंचला को दौड़ाना, चंचला का अन्दर भाग जाना, केशव का ठोंकर खाकर गिरना)

केशव—देखूँ तो तुम्हें कौन बचाने आता है । कौन माता का लाल मेरे हाथ से छुड़ाता है ? अच्छा, भाग गयी ? कहां भाग कर जायगी ।

(रामानन्द का पड़ोसियों के साथ आना)

रामानन्द—यह देखो ! यही वह शराबी है ।

केशव—क्यों बे उल्टू के पट्टे ! अपने सहायकों को साथ लाया है ? चोरी करके अपना बल दिखाने आया है ।



१ पड़ोसी—अरररर यह मेघ तो जल भरे हुये बैठा था, आते ही बरस पड़ा ।

२ पड़ोसी—भाई ! सत्य कहो, यह सब क्या गडबड़ भाला है ?

केशव—यह मेरी स्त्री से प्रेमालाप करता था ।

रामा०—मैं ? और प्रेम ? यह अवस्था और प्रेम ? एक तो बिना आज्ञा मेरे गृह में घुस आना, दूसरे मेरी पत्नी पर हाथ उठाना और उलटा मुझ ही पर दोष लगाना ! वाह रे सयाना !

केशव—बेईमानी ! बिलकुल बेईमानी ! खुलमखुला बेईमानी । घर मेरा और मालिक यह ।

रामा०—वाह ! पत्नी पर तो हाथ फेराही था, अब घर पर भी हाथ फेरने लगे ?

केशव—मैं यह पूछता हूँ कि तू मेरे घर में किस अधिकार से आया ?

रामा०—और मैं कहना हूँ कि तू मेरे घर में किस अधिकार से आया था ?

केशव—तेरा घर ? तेरा घर कौन सा ?

रामा०—जहाँ तुम एक घण्टा पहले गये थे ?

केशव—मैं गया था ? अभी मैं कहाँ गया था ?

रामा०—चंचला से प्रेम दिखाने ।

केशव—चंचला ? चंचला तो मेरी पत्नी है, अर्धाङ्गिनी है ।

रामा०—देखो, मित्रो ! अब तो विश्वास हुआ ?

१ प०—नहीं । यह घोटाला अब तक साफ नहीं हुआ ! चंचला आये तो यह झगड़ा अभी समाप्त हो जाये ।



२ प०—लो, वह चंचला आ रही है ।

(रामानन्द की पत्नी चंचला का बालक के साथ आना और केशव की पत्नी चंचला का प्रवेश । दोनों का अपनी अपनी पत्नी का हाथ पकड़ कर दिखाना)

केशव—क्या, यह तेरी पत्नी है ?

रामा०—क्या, यह तेरी पत्नी है ?

केशव—क्या, तुम उसके लिये लड़ रहे थे ?

रामा०—क्या, तुम उसके लिये भगड़ रहे थे ?

१ प०—अब समझ में आया । यह सब घुटाला एक तरह के मकान एक नाम और मद्यपान के कारण हुआ ।

केशव—वह कैसे ?

१ प०—ऐसे, कि इनका और तुम्हारा मकान एक ही सदृश है । नशे की तरंग में तुम इनके मकान को अपना मकान समझ कर घुस गये, उसी से यह उत्पात मचा ।

केशव—अब समझा । भाई ! मैं तुम लोगों का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ कि समय पर आ कर मेरी भूल बताई । नहीं तो आज भयानक रक्तपात हो जाता—मुफ्त में मैं शूली पर लटकाया जाता ।

रामा०—अर्धाङ्गिनी पर अपने हमारा जो रोष था ।

निर्णय हुआ है आज कि मद का यह दोष था ॥

गाना

सब—चलो भगड़ा चुका सब टण्टा मिटा—

भूले भटके चेत गये ॥ चलो०—



केशव—मद का प्याला किया घोटाला—
जिस कारण अचेत हुये ॥ चलो०—
सब—बिगड़ के बनना है यह सुधरना
नहीं है इसमें कोई भूल—
दिन का भटका शाम को आये—
केशव—कहते हैं सब उसको फूल—
सब—जाने दो जो बीत गया ॥ भूले०—
(गाते हुए सब का जाना)



लक्ष्मी का मकान

(लक्ष्मी का कागज मोड़ते दिखाई देना)

गाना

लक्ष्मी—आओ बहिन चंचला ! अच्छे समय पर पधारी ।
केवल अब यह थोड़ाही कागज मोड़ने को और बाकी रह
गया है ।

चंचला—लाओ बहन ! मैं भी मोड़ूँ ।

लक्ष्मी—नहीं २ तुम्हें मेरी शपथ, तुम इसे न छूओ । रहने
दो मैं समाप्त कर चुकी हूँ ।

चंचला—बहिन ! तुम इतना कष्ट उठाओ और मैं बैठी हुई देखती रहूँ—यह कब सम्भव है ?

लक्ष्मी—बहन ! यह क्या कम उपकार है कि मेरे दुख और कष्ट में सहायक बन कर गाँव २ की धूल छानकर—मेरे लिये दूर २ से यह काम ला देती हो ?

चंचला—यह तो अपना कर्त्तव्य है—उपकार कैसा ? परन्तु बिबश हूँ कि प्रयत्न और भाग्य में घोर युद्ध हुआ और भाग्य परास्त हुआ । आज मैं ग्राम के सभी कारखानों के द्वार पर दया की भीख माँगने गई थी, पर दुर्भाग्य से किसी स्थान से हमें कल के लिये काम न मिला ।

लक्ष्मी—तो इस कार्य के समाप्त होने के पश्चात्—मेरा क्या होगा ? अपना जीवन निर्वाह कैसे होगा ?

चंचला—इसी चिन्ता ने मुझे भी व्याकुल बना रखा है । क्या करूँ ? जिस स्थान पर गई सभी ने मुझे निराश उत्तर से लौटाया । सबों ने मेरी प्रार्थना पर 'नहीं' उत्तर सुनाया । ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान तुम से बिल्कुल रुठ गया है—एकदम निर्दयी बन गया है ।

लक्ष्मी—बहिन ! भगवान पर क्यों दोष लगाती हो ? यह तो अपना अपना कर्म—फल है । यदि छापेखाने में काम नहीं मिल रहा तो जाने दो । कोई दूसरा कार्य ला दो—उसे ही करके अपना पेट पाटूँगी—इस दुख के समय को काटूँगी ।

चंचला—क्या करूँ ? कहा जाऊँ—कहाँ से काम लाऊँ ?

लक्ष्मी—बहन ! गृह में बैठ कर यदि कठिन से कठिन कार्य भी करने को मिले तो लाओ—मैं उसे पूरा करूँगी । इस



दुख और कष्ट में भी ईश्वर पर भरोसा कर प्रसन्न रहूँगी। किसी का गेहूं पीसना हो तो उसेही लाओ मैं उसेही पीसूँगी।

(मोतीलाल का आकर एक तरफ खड़े हो जाना)

चंचला—गेहूं पीसोगी ? बहन ! यह क्या कह रही हो ?

लक्ष्मी—वही जो सत्य है—इसमें आश्चर्य की कौन बात है ?

मोती०—(स्वगत) लक्ष्मी ! लक्ष्मी !! कौन सी शक्ति तेरे मुख में बोल रही है—कौन साहस तुझे उत्साहित बना रहा है ?

चंचला—बहन ! गेहूं पीसना बड़ा कठिन कार्य है ? तुम जैसी सुकुमार स्त्रियों के योग्य यह कार्य नहीं है। तुम सुख के देवता की गोद में पली हो—लक्ष्मी ने सदैव तुम्हारी सहायता की है—अब क्या तुम गेहूं पीसोगी ?

लक्ष्मी—किन्तु दुर्भाग्य के एकही ठोकर से लक्ष्मी ने मुझे त्याग दिया और उस ठोकर द्वारा उड़ी हुई दरिद्रता रूपी धूल मेरे हाथ में लिपटी है। अतः परिश्रम ही इस दरिद्रता को दूर करने की औषधि है। समय काटने और पेट भरने के लिये मुझे हर प्रकार से इस औषधि का सेवन करना चाहिये, फिर इसमें कष्ट कैसा ? भारत वर्ष की गरीब बहनें तो इससे भी कठिन से कठिन काम अपने हाथ से सुख पूर्वक करती हैं।

चंचला—यह यथार्थ है, पर उनके शरीर में शक्ति है—वे जन्म काल से इस परिश्रम में लिप्त हैं। पर तुम तो उपवास और दुख की असह्य वेदना से शक्तिहीन हो गई हो ? भला, तुम ऐस कठिन कार्य का भार कैसे उठा सकोगी ?

लक्ष्मी—चंचला ! तुम भूलती हो जो ऐसा बिचार मन में लाती हो। ईश्वर रोग, शोक और निर्बलता देने से प्रथम ही

उसके भोगने की शक्ति भी प्रदान कर देता है। तुम इन बातों की चिन्ता न करो—जाओ जहाँ से ऐसे कार्य मिले उन्हें ले आओ।

चंचला—अच्छा, बहिन! यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो मैं चेष्टा करती हूँ—वह परमात्मा पूर्ण करेगा। हाँ बहन! दो दिन से मैं एक बात कहने वाली हूँ पर यहाँ आने पर स्मरण न रहा, अतः न कह सकी। क्या मैं जहाँ चलने को कहूँगी आप चलेंगी?

लक्ष्मी—कहाँ ले चलना चाहती हो साफ साफ कहो?

चंचला—वद्रीनाथ—क्षेत्र में।

लक्ष्मी—वहाँ क्या है और किस कारण चलने का विचार है?

चंचला—आज चार दिवस से वहाँ पर सहस्रों मनुष्य को भोजन दिया जा रहा है। दरिद्रों की सहायता की जा रही है। तुम को इस दशा में—उपवास की भयंकर अवस्था में देख मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है—मेरे नेत्रों के सामने अन्धेरा आ रहा है। यदि तुम वहाँ पर चलोगी तो कुछ दिन क्षुधा भर भोजन कर कष्ट के दिन काट लोगी।

लक्ष्मी—(स्वगत) हे परमात्मा! यह मैं क्या सुन रही हूँ? एक धन कुबेर की कन्या, एक वकील की स्त्री आज ऐसी भाग्य हीना हो गई कि उसके पेट भर भोजन के लिये एक पड़ोस की कन्या सदाव्रत पाने का उपदेश दे रही है। प्रभो! ये शब्द प्रेम के नहीं हैं, वरन मुझ पर बिजली टूट रही है। आह! भगवान! इस संसार में हमारा जीना धिक्कार है। (आँखों में आँसू भर आते हैं)



चंचला—यह क्या ? तुम्हारे नेत्रों में आंसू क्यों आ गये ? मालूम होता है मेरी बातों से तुम्हें कुछ कष्ट हुआ बहन ! मुझसे भूल हुई, क्षमा करो । मैंने किसी दूसरे भाव से इन बातों को नहीं कहा है ।

लक्ष्मी—नहीं नहीं बहन । मुझे कुछ कष्ट नहीं हुआ यह तो समय.....

चंचला—नहीं नहीं तुम मुझे भुलाना चाहती हो । मेरी इन बातों से तुम्हारे हृदय में जो दुख हुआ वह मैं भली भांति समझ गई । आंसू प्रकट होने का कारण जान गई ।

लक्ष्मी—चंचला ! मैं तुम्हारे स्वभाव को जानती हूँ । तुम्हारे दयार्द्र हृदय और उदार मन को पहचानती हूँ । तुम्हारी जैसी हितैषी बहन की बातों का भला मैं क्यों बुरा मानूँ ? तुमने जो सलाह दी है वह यथार्थ है, किन्तु शोक है कि मेरे मलीन और फटे हुये वस्त्र मुझे वहाँ चलने से रोक रहे हैं । मेरी दरिद्रा अवस्था, मेरी सोचनीय दशा मेरे नेत्र से आंसू बन कर निकल रहे हैं ।

चंचला—दुख है कि मैंने बिना विचारे कुसमय में इन बातों को प्रकट किया, जो तुम्हारे दुख का कारण हुआ ।

लक्ष्मी—बहन ! अब इन बातों का पश्चात्ताप न करो । अपने हृदय से इस कल्पना का त्याग दो । कृपया जाओ कहीं से गेहूँ इत्यादि पीसने का कार्य ले आओ—मुझ पर दया कर यही सहायता पहुँचाओ ।

मोतीलाल—(स्वगत) शाबस ! लक्ष्मी तेरा बिचार सराहनीय है । मैं तेरे उच्च बिचार और साहसी हृदय को बातें खड़ा २ सुन



रहा था। तूने मुझ अधम शराबी मनुष्य की मर्यादा को अपने आंचल से ढक कर बचा लिया ? पतिव्रता और सहधर्मिणी का सच्चा चित्र मुझे दिखा दिया।

लक्ष्मी—बहन चंचला ! तुम चुप क्यों हो गई ?

चंचला—बहन ! तुम सती हो, मानुषी रूप में देवी हो, पातिव्रत की जागृत मूर्ति हो, तुम्हारे चरणों को स्पर्श करने से अनेक तीर्थ यात्रा का फल प्राप्त होगा। बड़े २ महात्मा पुन्य-घान् भी तुम जैसी पतिव्रता रमणी के आगे शीश झुकायेंगे। आश्चर्य है कि मेरे मतिमंद पति की भांति तुम्हारे पति देव भी मद्यपान में लिप्त हो गये हैं। तुम्हें और अपने आपको भूल रहे हैं। परमात्मा करे इस मद्य और मद्यपान करनेवाले पति का बिनाश हो ! आह, पत्नी घर में मुर्दे की भांति पड़ी २ अन्न बिना मरे, रात-दिन फाका करे और पति मदिरा में उन्मत्त होकर आनन्द से बिचरें।

लक्ष्मी—चंचला बहिन ! ऐसा न कहो। स्त्रियों को स्वामी देव के प्रति एक भी अपशब्द न कहना चाहिये। पति हमारे ईश्वर हैं, उन्हें देवतुल्य मानना चाहिये।

चंचला—देवतुल्य मानना चाहिये ? क्या उनकी इस करतूत पर कि वह निकृष्ट मद्य में बेहोश होकर नालियों और पनालों में गिरें, फिर भी हम उन्हें ईश्वर कहें ?

लक्ष्मी—चाहे वे जो कुछ करें, परन्तु हम नारी-कर्तव्य को क्यों भूले ? वेद-मंत्र द्वारा बँधे हुये, ब्राह्मण देव द्वारा अर्पण किये हुये, अपने स्वामी को हम अपने मुख से बदचलन कहें ? छिः छिः।



चंचला—बहन ! लक्ष्मी तुम्हारे लिये मैं नीच से नीच कार्य करने को तय्यार हूँ, परन्तु इस विषय में तुम्हारी बात मानने से लाचार हूँ । ऐसे मद्यपी पति चूल्हे में जायँ उनके घर-द्वार और संगति में आग लगे ।

लक्ष्मी—बस २ जिह्वा सँभालो, मेरे सन्मुख भूल से भी ऐसा शब्द उच्चारण न करो । मैं अपने कान से एक शब्द भी इसके आगे नहीं सुनना चाहती हूँ, मैं ऐसी स्त्रियों से घृणा करती हूँ ।

चंचला—बहिन ! रुष्ट न हो । तुम्हीं विचारो और न्याय करो कि किस के कारण तुम्हारी यह दशा है । किस के दोष से तुम अन्न वस्त्रहीन हो रही हो ? यह दुःखमय जीवन किसके कारण बीत रहा है ? कहो, ऐसी विपत्ति के समय भी दादा ने तुम्हारे साथ क्या सद् व्यवहार किया है ?

लक्ष्मी—यह स्वामी का नहीं हमारे भाग्य का दोष है । सूर्य जैसे तेजस्वी देवता पर भी ग्रहण आ जाता है, यह समय का रोष है । अच्छा, मेरे साथ आओ, कृपाकर तनिक बच्चे के दूध लादो ।

(दोनों का प्रस्थान मोतीलाल का प्रकट)

मोतीलाल—लक्ष्मी ! लक्ष्मी ! तू ने अपने नम्र स्वभाव और पातिव्रत के आदेश से चंचला के मनोभाव को बदल दिया । उसके क्रोधित हृदय को शीतल बना दिया । परन्तु मुझ मद्य की निद्रा में निद्रित मनुष्य को तेरा कोमल हृदय और प्रेमी उपदेश नहीं चाहिये । मुझ जैसे घृणित और अधम को चंचला जैसी स्त्री के मुख



से निकले हुये वाक्य रूपी वाण चाहिये । जिसका एक एक शब्द विष बनकर मेरे हृदय को दग्ध कर दे, कटार बनकर मेरे शरीर को विदीर्ण कर दे । परन्तु ओ प्रेम की प्रतिमा सती साध्वी ! तूने एक मद्य के विष से बेसुध काले नाग की सहायता कर उसका पोषण किया—और उसने तेरे इस उपकार के बदले में तुझे दंशन किया । धिक्कार है । मोतीलाल तुझपर धिक्कार है । दुष्ट, तू ने मनुष्य के गृह में उत्पन्न होकर पशु जैसा व्योहार किया । ओ हतभागे ! तेरी बुद्धि क्या हुई ? तेरी उच्च श्रेणी की शिक्षा कहाँ लुप्त हो गई ? मूर्ख ! तू ने अपने उच्च वंश को डूबा दिया—आर्यजाति के मुख में कालिख लगा दिया ? थू है ! धिक्कार है !! तुझे और तेरे कर्तव्य को । (डदासीन होना)

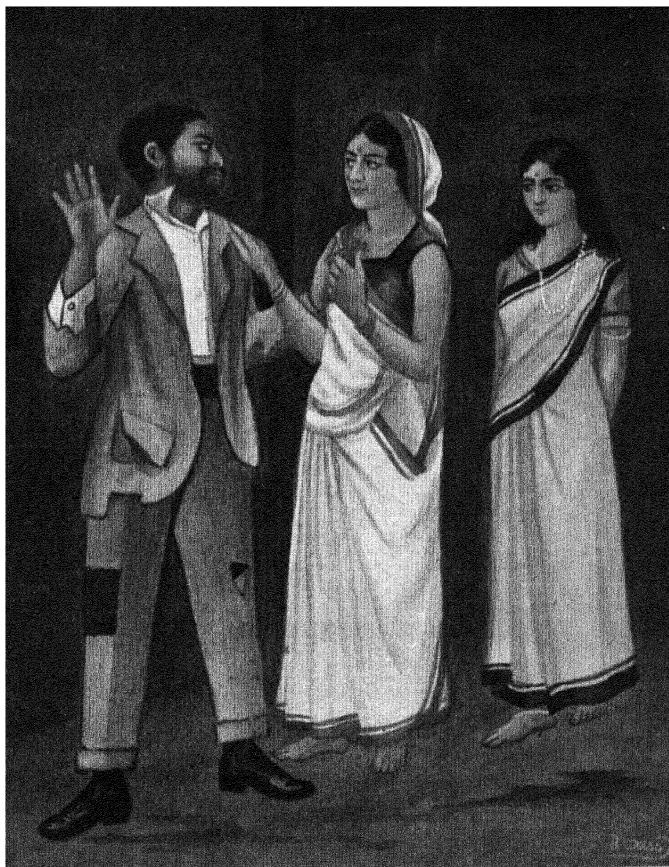
लक्ष्मी—(आकर) प्राणेश्वर ! कहिये आप उदास क्यों हैं ? क्या किसी नवीन घटना ने स्वामी को कुछ कष्ट पहुँचाया है ?

मोती०—लक्ष्मी ! आज से मैंने मद्य पीना त्याग दिया !

लक्ष्मी—(प्रसन्नता से) क्या स्वामी देव सत्य कह रहे हैं ? यह मेरे कान क्या सुन रहे हैं !

मोती०—सत्य और बिल्कुल सत्य ।

लक्ष्मी—धन्यवाद २, परमात्मा ! आज तूने एक मृतक शरीर में प्राण डाल कर उसका पुनर्जन्म किया, अपनी शक्ति और अपार महिमा का प्रत्यक्ष फल दिया । मैं हर्ष से गद्गद् हुई जा रही हूँ—फूली नहीं समा रही हूँ । स्वामी देव ! प्राणनाथ ! मेरी अन्तिम प्रार्थना आपके चरणों में यही है कि इस अपनी प्रतिज्ञा को कदापि न त्यागियेगा । भूल से या किसी के बहकावे से भी इस सर्वनाशिनी मदिरा का स्पर्श न कीजियेगा ।



मोती०-सत्य और बिल्कुल सत्य ।



(लक्ष्मी का पैरों पर गिरना)

मोती०—प्रिये ! लक्ष्मी ! यह तू क्या करती है ? इस शराबी तुच्छ मनुष्य के पैर पड़ती है ? नहीं २ ऐसा न कर । इस घृणित ने अपने ज्ञान, धर्म, मर्यादा को मदिरा के प्याले में डुबा दिया है । मद्य में उन्मत्त होकर अपने साथ तुझ देवी के मान को भी मिटा दिया है । पिता-माता की पुन्याई को, उच्च जातिकी पवित्रता को, मद्य के लिये तिलाञ्जली दे दिया । अपने धर्म-कर्म को त्याग कर आसुरी कार्य में लिप्त हो गया । आह ! तुझ जैसी देवी, जिसके गृह पर नित्य सदाव्रत बँटता था, सहस्रों भिक्षुक भोजन पाते थे, उसे एक एक दाने के लिये मोहताज बना दिया । जिसके पिता, भाई धनकुबेर का भंडार रखते थे; उसकी पुत्री को मुझ अधम ने इस दशा को पहुँचा दिया । देवी लक्ष्मी ! मुझ अधम से दूर भाग । मुझ से घृणाकर । यह मूर्ति नहीं पत्थर है । इसे देवता समझ कर इसकी पूजा न कर । इस शराबी चांडाल लम्पट की छाया से भाग—इसके संसर्ग को त्याग दे ।

लक्ष्मी—प्राणेश ! बीती हुई बातों का स्मरण कर व्यर्थ अपने हृदय को दुःखित न बनाइये । अब इस शोक को हृदय से दूर कीजिये । आप ज्ञान के सागर, गुण के आगर हैं, यदि यह शुभघड़ी निश्चय सफल होगी, तो शीघ्र हमारी खोई वस्तु फिर हमें प्राप्त हो जायेगी । लक्ष्मी का पेश्वर्य, कुबेर का भण्डार, बिना बुलाये हमारे पास आयेगा—सुख विश्रान्ति और आनन्द मेरे द्वार पर पहरा देंगे ।

मोती०—प्रिये ! मैं शपथ खाकर कहता हूँ कि आज से मैं मदिरा को स्पर्श न करूँगा । अपनी जिह्वा पर भी मदिरा नाम



को न आने दूँगा। सनद गई तो चिन्ता नहीं—मैं कोई दूसरी नौकरी करके जीवन निर्वाह करूँगा और ईश्वर को साक्षि देकर कहता हूँ कि आज से तेरी एक बात भी न टालूँगा।

लक्ष्मी—प्रभो ! यदि आप के मन में ऐसा भाव जागृत हो गया, तो यह सेविका प्रण करती है, कि प्रति दिवस शिव-मन्दिर में गङ्गाजल चढ़ायेगी—शंकर भगवान की पूजा कर शीघ्र अपनी उन्नति के दिवस को बुलायेगी। प्राणनाथ ! इस समय आपके एक एक शब्द ने मेरे रोम रोम को प्रफुलित बना दिया। मेरे सोये हुये हर्ष और सुख को जगा दिया। लो इस सुखमय समय, मैं अपने पुत्र को आलिंगन कर आनन्द को बढ़ाओ। अपना निश्चित और दृढ़ संकल्प वाक्य अपने पुत्र को सुनाओ।

मोती०—आओ २ मेरे प्यारे पुत्र ! अपने बिछुड़े हुये पिता के हृदय से लग जाओ। (गोद में लेकर) मेरे लाल ! मेरे रक्त के जीवन ! मुझे क्षमा कर। आज तेरा नालायक पिता अपनी भूल पर पश्चात्ताप कर रहा है और तेरे सन्मुख प्रतिज्ञावद्ध हो रहा है।

सब—

गाना

धन धन ईश्वर तेरी माया, कैसा शुभ दिन आया।
पर्वत दुखको तिलवत कीन्हा, क्षण में कष्ट सभी हरलीन्हा ॥
करुणानिधि प्रभुकरुणा कीन्हा, दीन की सुधि हरिने लीन्हा।
सुख का बादल छाया—कैसा शुभ दिन आया०—
डूबत को प्रभु आय उबासो—दुख सागर से मोहे तासो।
नैया भव में डोल रही थी; प्रभु ने कीन्हीं दायो ॥—कैसा०—

(गाते २ जाना)



बाग-मार्ग

(मोतीलाल का प्रवेश)

मोती०—अहा ! आज मेरी स्थिति में कैसा परिवर्तन हो गया ? बाल्यकाल से युवाकाल तक जिस उद्यान की शोभा मेरे हृदय को प्रफुल्लित बनाती रही, आज वही दृश्य मेरे नेत्रों—मैं बिल्कुल नवीन दिखाई दे रहा है। जिस प्रकार अंधेरे में सोया हुआ मनुष्य आँख खोलने पर एकाएक प्रकाश पर दृष्टिपात नहीं कर सकता है, उसी प्रकार आज यह जगत का चमत्कारिक दृश्य मेरी दृष्टि को चमकित करता है। प्रथम के मित्रों का मिलन, हितैषियों का दर्शन, मुझे जो धैर्य और सुख प्रदान करता था—वह इस तुच्छ वस्तु के नोद में निद्रित होते ही स्वप्न हो गया। आह ! मद्य जैसी घृणित और तुच्छ वस्तु के उन्माद में पड़ कर मैं समाज और भाई-बन्धुओं की दृष्टि से च्युत हो गया। मान-प्रतीष्ठा और अपने धर्म से गिर गया ! अब इस संसार में अपना काला मुख किसे दिखलाऊँ ? किस मुख से किसी के पास सहायता मांगने जाऊँ ? क्या इस मुख को जिससे अब तक मदिरा की दुर्गन्ध प्रगट हो रही है, मेरे मित्र अपनायेंगे ? क्या ये नेत्र जिसमें अब तक मदिरा का खुमार भरा है, संसार में उच्चस्थान पायेंगे ? आह ! यही चिन्ता मेरे हृदय को द्रवित

कर रही है। यही लज्जा मुझे किसी के पास जाने की आज्ञा नहीं दे रही है। हँ! यह सामने से कौन आ रहा है? शास्त्री और खुदाबक्स ? (शास्त्री, खुदाबक्स का आना)

शास्त्री—(आकर) अरे वाह मित्र मोतीलाल ! तुमने तो मुझे खूब चरका दिया । चारों ओर तुम्हें दूँदते मैं थक गया। मैंने समझा कि तुम कहीं मदिरा की धुनी रमाकर समाधिस्थ हो गये !

खुदा०—तमाम शराब खाने की खाक छानी-बोतलों को उलट पुलट कर तोड़ डाला, परन्तु फिर भी कहीं तुम्हारा पता न चला ।

शास्त्री—चलो २ शीघ्र चलो । केशवराम बहुत रोगग्रस्त है। अतः आज मण्डली का विशेष अधिवेशन है । मेरे साथ चलो ।

मोती०—नहीं भाई ! इस समय मैं नहीं जा सकता, मुझे क्षमा करो ।

शा०—मित्र ! निराश न हो । केवल अधिवेशन ही नहीं है, कुछ हृदय को शान्त बनाने का भी प्रबन्ध है ।

मोती०—मुझे इन बातों से कोई प्रयोजन नहीं । मैं अब मदिरा मण्डल में कभी नहीं जा सकता । ऐसे निकृष्ट स्थान पर पाँव भी नहीं रखूँगा ।

खुदा०—नहीं २ यार ! यह क्या कहते हो ? तुम्हारे बिना सब रंग बदरंग हो जायगा । जिस प्रकार बिना बर्फ के विस्की का लुत्फ फीका रहता है, उसी तरह तुम्हारे बिना मण्डली का मज़ा किर किरा हो जायगा ।



मोती०—खुदाबख्श! मुझे क्षमा करना—मैंने आज से मदिरा को तर्क कर दिया। इसका पान करना छोड़ दिया।

खुदा०—क्या एकदम छोड़ दिया?

मोती०—हाँ, इसकी ओर देखना भी त्याग दिया।

शा०—यह क्या कहते हो मोतीलाल! तुमने मदिरा के नशे में भूल कर भी ऐसी अमंगल कल्पना नहीं की थी! यह क्या अनर्थ करते हो? जिस वस्तु को उत्तम कह कर एकबार ग्रहण किया, उसे फिर निषिद्ध कह कर त्यागते हो? अपने मुख से स्वयं मूर्ख बनते हो? अपनाई वस्तु का त्यागना मनुष्य की भारी भूल है।

स्वधर्म निधनं श्रेय पर धर्मो भया वहः

खुदा०—बहुत ठीक। बिल्कुल सच है। किसी कार्य को किया, बहुत बुरा किया—करके छोड़ दिया और भी बुरा किया।

शास्त्री०—खां साहेब! इस समय चलो, यह गर्म शीशा अपने आपही धीमे २ ठंडा हो जायगा; हमलोगों के जल छिड़कने से ठूट जायगा। सर पर पड़ी हुई शमशान की राख से हृदय में उत्पन्न हुआ बैराग्य केवल पानी का बुलबुला है, जो क्षण भर के लिये उठता और मिट जाता है। यह त्याग और निरस्कार केवल दो घड़ी के लिये हैं। यह प्रतिज्ञा पानो की लकीर, स्वप्न का दुर्ग और बालू की भीत है जो क्षण मात्र में लोप हो जायगी।

(दोनों का जाना)

मोती०—मूर्ख मोतीलाल! तू वही मनुष्य है, जो अपनी बुद्धि और ज्ञान के मार्ग में भनाला पत्थरों से भी बाधा मानता



अपना अपमान समझता था। आज वही तू है जो मदिरा में अपनी मानप्रतिष्ठा खोकर दूसरों की सहायता के लिये मार्ग में खड़ा प्रतीक्षा कर रहा है। विद्या और बल रखते हुये भी जगत की दृष्टि से ऐसा गिर गया है, कि तुच्छ से तुच्छ मनुष्य का आश्रयित हो रहा है।

(एक मनुष्य को आते देख कर)

हैं ! यह सामने से कौन आ रहा है ? यह तो कोई प्रतिष्ठित मनुष्य दिखाई दे रहा है। आशा है, यह मेरी कंगाल अवस्था देखकर मुझे इस कष्ट से छुड़ायेगा। अपनी उदारता का परिचय देगा। (आने वाले मनुष्य को प्रणाम करता हैं। आगुन्तुक कुछ उत्तर नहीं देता चला जाता है) ओ निर्दयी दुर्देव ! क्या मेरे अभिमान को मिटाने के लिये, मेरे घमंड को चूर करने के लिये इस तिरस्कार के ठोकर के सिवा कोई दूसरा उपाय न था ? मुझसे इतना घृणा कि मेरे प्रणाम का उत्तर भी न दिया और चला गया ?

(दूसरे मनुष्य का आना)

मोती०—श्रीमान् प्रणाम !

२ मनुष्य—(स्वगत) हैं ! यह मूर्ख सामने कहाँ से आ पड़ा ? यदि इससे कोई बात करते देख लेगा, तो मुझे भी शराबी के नाम से बदनाम करेगा। किसी तरह इस आपत्ति को अपने सिर से टालना चाहिये, इधर उधर की बातें कह कर इससे बचना चाहिये। (प्रकट) कौन ! मोतीलाल ! कहो आनन्द से तो हो ?

मोती०—बाबू साहब ! आप से कुछ निवेदन करना है।



२ मनुष्य—अच्छा, किसी दूसरे समय मिलना। मैं इस समय एक बड़े आवश्यक कार्य से जा रहा हूँ। (स्वगत) भाई सीताराम ! ठड़े रहो मैं भी साथ चल्दूँगा। (चले जाना)

मोती०—आह ! इसके घृणित मुस्कुराहट और तिरस्कृत शब्दों के वज्रपात ने मेरे हृदय को चूर कर दिया। आज यदि संसार एक मुख से—एक जिह्वा से मेरा तिरस्कार करता तो भी इस तुच्छ मनुष्य के घृणा-रूपी प्रहार के बराबर मेरे हृदय पर चोट न पहुँचता ?

(तीसरे मनुष्य का आना)

मोती०—भाई जी ! नमस्कार !

३ म०—तुम कौन ? तुम्हारा क्या नाम है ? कदाचित्त तुम्हें हमने कहीं देखा है ?

मोती०—महोदय ! मैं वही हूँ जिसे आपने आर्य-मदिरा-मण्डल में कष्ट पड़ने पर सहायता देने का बचन दिया था। मेरा नाम मोतीलाल है। आज मैं बड़े संकट में पड़ा हूँ, कृपया अपने बचन का पालन कर मुझे कृतार्थ करें।

३ मनुष्य—ओ निर्लज्ज मनुष्य ! तुम्हें कहते हुये भी लज्जा नहीं आती ? ऐसे समय राज मार्ग में मदिरा-मण्डल का नाम लेता है ? जब मैं तुम्हें पहचान कर भी अनजान बन गया, तो तू मदिरा नाम लेने से नहीं सावधान हो गया ? मूर्ख शराबी ! शराब-खाने में दिये हुये बचन और मद्यपान करने का परिचय देता है ? चलते हुये राह में मदिरा और बोतलों का नाम लेता है ? मदिरा पान करते समय तुम्हें जैसे मनुष्य को हम लोग केवल मनोरंजन के लिये अपना मित्र बना लेते हैं, परन्तु वहाँ



की मित्रता वहीं समाप्त कर देते हैं। मैं तुम्हे भली भाँति जानता हूँ। तू कष्ट, दुख, संकट इन शब्दों को सुना कर भोले श्रमीरों और नये शराबियों को लूटता है; अपनी तरह संसार को मूर्ख समझ कर धोखा देता है। (चले जाना)

मोती०—आह ! भाई, यह तुम नहीं कह रहे हो, वरन् मेरे कर्म मुझे धिक्कार भरे शब्द सुना रहे हैं। यह मेरे दुर्दिन हैं जो तुम्हारे ऐसे एक तुच्छ मनुष्य भी मुझसे घृणा कर रहे हैं। (चौथे मनुष्य को आते देखकर) यह कौन सामने से आ रहा है ? यह तो मित्र श्यामलाल ज्ञात होते हैं। (श्यामलाल का आना)

मोती०—भाई श्यामलाल जी ! प्रणाम !

श्याम०—कौन मोतीलाल ! जैगापाल ।

मोती०—श्यामलाल जी ! मैं आपसे कुछ निवेदन करना चाहता हूँ। आशा है आप मेरी प्रार्थना पर ध्यान देंगे।

श्याम०—मोतीलाल, तुम मेरे परम मित्र हो, भाई हो। निःसंकोच कहो, इतने कातर न हो।

मोती०—भाई ! मैं इस समय विलक्षण स्थिति में हूँ—मेरी सहायता कीजिये। पैसा-कौड़ी मैं कुछ नहीं चाहता, केवल यही भिक्षा माँगता हूँ, कि मुझे कहीं नौकरी दिलवा दीजिये ?

श्याम०—नौकरी ? भला मैं तुम्हें कौनसी नौकरी दिलाऊँ ? तुम स्वयं बुद्धिमान हो, लायक हो, बी० ए० पास हो।

मोती०—नहीं भाई ! मेरी बुद्धि एक पशु से भी निकृष्ट है। मैं एक क्षुद्र से भी गया बीता हूँ। आप यदि एक साधारण नौकरी भी दिला देंगे, तो मैं प्रसन्नता से स्वीकार करूँगा। उसके द्वारा अपने तीन जनो का जीवन निर्वाह करूँगा।



श्याम०—तुम मेरे परम मित्र हो। मैं तुम्हारे लिये हर तरह से तय्यार हूँ। पन्द्रह रुपये माह की एक नौकरी तो है.....

मोती०—तो वही बहुत है। उससे ही हम लोगों का उदर पालन हो जायगा।

श्याम०—किन्तु वह नौकरी रेली ब्रादर्स कम्पनी की है। वहाँ हजारों रुपये का माल तुम्हारे आधीन रहेगा। अतः उसके लिये जमानत देना आवश्यक है।

मोती०—तो आप मेरे जामिन पड़ जाइये। कम्पनी की नौकरी दिला दीजिये।

श्याम०—मोतीलाल ! तुम मेरे भाई हो, परम मित्र हो। अतः मैं स्पष्ट कहता हूँ, कि तुम मदिरा पीते हो—मदिरा पीने वाले का विश्वास नहीं। इस हेतु मैं जामिन नहीं पड़ सकता। जमानत के लिये मुझे क्षमा करना। हाँ, किसी दूसरे को तुम जमानत में दे सकते हो, परन्तु दूसरा भी जान बूझ कर क्यों अग्नि में कूदेगा ? मोतीलाल ! मद्य बड़ी ही तुच्छ और घृणित वस्तु है। इससे मनुष्य की मान-मर्यादा सब मिट्टी में मिल जाती है—मान, प्रतिष्ठा लोगों से उठ जाती है। मद्यपी का कोई विश्वास नहीं रखता है; संसार उसके स्पर्श से घृणा करता है। अतः भाई ! इस मद्य पान का त्याग करो—ऐसी नीच वस्तु से दूर रहो। अच्छा, मैं जाता हूँ, विलम्ब हो रहा है। (जाना)

मोती०—आह ! यह मेरे कान क्या सुन रहे हैं। यह मेरे नेत्र अपने दुर्देव के दसों अवतार को देख रहे हैं। ओ अभागे मोतीलाल ! यह रात्रि मैं पीये हुये तेरे मद्य के दुर्गंध



तुझे यह शब्द कह रहे हैं। अन्यथा एक कंगाल अनपढ़ आज तुझे मद्य के छोड़ने का उपदेश सुनाता ? तेरे जूते की गर्द साफ करने योग्य यह मनुष्य, तेरी जमानत करने से दूर भागता ? आह ! जब ऐसे २ तुच्छ और क्षुद्र व्यक्ति तुझे अपने पाँव की धूल समझते हैं, तो सद्गुणी और धनवान पुरुष तुझे क्या कहेंगे ? क्या आशा है कि वे तेरे साथ सहानुभूति प्रकट करेंगे ? हा दुर्दैव ! अब मैं कौन मुख लेकर उस उपवासी बालक, दुखित स्त्री के पास जाऊँ ? क्या मूर्ख पिता, नालायक पति और नीच शराबी मनुष्य कहला कर अपना मुख दिखलाऊँ ? ईश्वर ईश्वर ! तूने मुझे क्यों जन्म दिया ? और जन्म देकर भी अब तक क्यों जीवित रखा ? क्या करूँ, कहाँ जाऊँ ? किस प्रकार इस संसार से छुटकारा पाऊँ ? (सोच कर) आत्महत्या ? परन्तु मृत्यु का उग्ररूप देखकर आत्महत्या से हृदय भयभीत होता है । (सोच कर) ओ निर्बल हृदय के शराबी ! धैर्य धर ! मृत्यु का दूसरा रूप यह मदिरा है । अतः इसे ही आलिंगन कर । मनरूपी सागर में उठने वाली शोक की लहरों का नाश यह मदिरा ही कर सकती है — मन की व्यथा और इन चिन्ताओं को दूर करने के लिये यही औषधि है । ऐ आशा-निराशा, बाल-स्नेह, पत्नीप्रेम, ज्ञान-धर्म तुम सबको मेरा अन्तिम प्रणाम है । अब मेरे जीवन पर्यन्त और अन्तिम सांस तक मदिरा का एक प्याला और इसका एक २ जाम है ।

(चले जाना)



मदिरा-मण्डल

(शास्त्री विष्णुदत्त, खुदाबक्स इत्यादि का शराब पीते दिखाई देना)

विष्णु०—केशवराम की अनुपस्थिति से यह मदिरा मण्डल जहाँ आनन्द का हाहा कार मचा रहता था, आज बिलकुल शमशान दिखाई दे रहा है ।

रहीम०—सच कहते हो भाई । उसके रोगग्रस्त ने इस सौभाग्य भवन को विधवा बना दिया है ।

विष्णु०—या उस वेश्या-गृह भाँति है, जो नौची के भाग जाने से नायका अपने पुराने रँगरूटों के साथ बैठी हुई मिथ्या हँसी हँस रही है ।

रहीम०—और इस मदिरा मण्डल का दूसरा रत्न मोती-लाल भी अब तक नहीं आया ।

खुदा०—वह अब यहाँ नहीं आयेगा ।

विष्णु०—कारण ?

खुदा०—वह रत्न आज प्रतिज्ञा के पत्थर से चकना चूर हो गया ।

रहीम०—क्या कहा तौबः । प्रतिज्ञा और शराबी की प्रतिज्ञा ? हा हा हा ! (हँसना) अजी शराबी की प्रतिज्ञा ऐसी है, जैसे पत्ते पर पड़ी हुई ओस, आँधी में चिराग़ । जो सूर्य के प्रथम प्रकाश और आँधी के पहले ही भोंके में गायब हो जाता है ।



आँधी का यह चिराग है तौबा नहीं जनाब ।
भोंके में एक हवा के होगा जो आब आब ॥

खुदा०—सच कहते हैं भाई ।
तौबा शराबे नाब से तौबा यह कैसी बात ।
छुटती नहीं है मुँह से यह काफिर लगी हुई ॥

विष्णु०—खुदाबक्स साहब ! यों नहीं यों कहिये—
पापी है वह मनुष्य जो बचन से बदल गया ।
नर्क गामी है मार्ग से मद के जो टल गया ॥

१ शराबी—मित्रों ! मोती और उसकी प्रतिज्ञा रूपी विचार
को इस मदिरा के प्याले में डुबा दो । आश्रो पीयो पिलाश्रो ।
श्रब उस चिन्ता को इस मदिरा के चिता में जला दो ।

(सब का शराब पीना)

खुदाबक्स—लेकिन यार, खाली खाली डफली बजाने से
तो यही अच्छा है, कि घर में बैठ कर कनस्टर बजायें ।

विष्णु०—सत्य है भाई, यह तो एक अन्धे की बारात है ।

१ शराबी—अजी यों नहीं यों कहो, कि बे मौसिम की
खेती है—खाली खाली मद्यपान करना ऐसा है, जैसे ऊसर में
हल चलाना ।

विष्णु०—तो क्या चाहते हो ?

खुदा०—चाहते क्या हैं बस यही—
कोई सुन्दर सलोनी कामनी पहलू में बैठी हो ।
मजा लूटें कभी जोबन का कभी प्याले की खेती हो ॥

रहीम०—वाह जी मियाँ किसान ! अच्छे मौके पर अपनी
अक्लमन्दी की खेती को उपजाया ।



विष्णु०—मित्रों, न घबराओ। मैंने एक सुन्हली किरण छमाछम को बुलाया है। वह देखो सामने आ रही है।

सब—आ रही है ? वाह ! वाह !!

(रंडी का आना । आदाव बजाना)

रंडी—बाबू साहब बन्दगी !

सब—बन्दगी बन्दगी। आओ आओ, बाईजी ! अपनी सुरीली तान से हमारा हृदय प्रफुल्लित बनाओ।

उस्ताद—हाँ बेटा, चलो तुमक चाल दिखाओ।

रंडी०— गाना ।

इन्हीं लोगों ने ले लीन्हा दुपट्टा मेरा ।

इन्हीं लोगों ने, इन्हीं लोगों ने ॥ इन्हीं०—

हमरी न मानो रंग रेजवा से पूछो—

किन्हने ओढ़ाय रस लीन्हा दुपट्टा मेरा०—

सब०—वाह वाह ! क्या गाया मानो बिजली चमकी और गायब हो गई।

[सबका इनाम देना रंडी का लेकर जाना]

खुदा०—लो भाई ! इस बचे हुये मद्य को समाप्त करो।

मोती०—(आकर) ठहरो ठहरो, मित्रों ! सब न पी जाओ। लाओ बोतल इधर बढ़ाओ।

विष्णु०—क्यों खुदाबक्स ! अब तो हमारा कहना सत्य हुआ। मोतीलाल ! आज तुम्हारे स्वभाव की परीक्षा हो गई। कहो तुम्हारी वह प्रतिज्ञा कहां गई ?

मोती०—हाँ हु*हैं मेरे स्वभाव की परीक्षा तो हो गई परन्तु मुझे अपने भाग्य की परीक्षा नहीं हुई।



सब—हा हा हा हा !

मोती०—बस ! जले पर नमक न छिड़को ! घायल सिंह को न छेड़ो। अपने तिरस्कृत मुस्कराहट से मेरी हँसी न उड़ाओ। जाओ, मेरे सन्मुख से तुम सब चले जाओ।

विष्णु०—चलो मित्रो ! व्यर्थ वादा विवाद कर के भगड़ा बढ़ाना अच्छा नहीं। यदि इसका मिजाज गर्म है तो हम लोग भी किससे कम हैं।

खुदा०—हाँ जी अपना तो अब निराला रंग है—ऐसे ऐसों का हमें नहीं गुम है। (सब का जाना मोती का मदिरा पानकरना)

मोती०—तो मुझे अब किसी मित्र और मित्रता की आवश्यकता नहीं। आओ ऐ मदिरा देवी ! मेरे हृदय में विराजमान हो। यद्यपि तेरे घातकी कर्त्तव्य को देख कर पशु भी कह सकता है, कि तू राक्षसी है, क्रूर है, पिशाचनी है; जिसको तूने ताका उसे मारा। परन्तु नहीं, तू जन्म से मरन तक साथ देने वाली संगिनी है। सब कुछ नाश होने पर भी, तू अपने भक्त को नहीं त्यागती है। आ, आ, ऐ देवी ! अपने शक्ति भरे हाथों से इस भक्त को अपने गले लगा। यदि इस आलिंगन से उसका प्राण होठों पर आ जाय, तौ भी उसका त्याग न करना।

(शराब का प्याला उठाकर पीना प्रेमचन्द का आना, उसे रोकना)

प्रेम०—मोतीलाल ! ठहरो।

मोती०—कौन प्रेमचन्द ! बस दूर रहो। भूखे सिंह से उसका शिकार न छीनो, विषैले सर्प के मुँह से मणि निकालने की चेष्टा न करो ?



प्रेम०—मोतीलाल ! मैंने लक्ष्मी के मुख से तेरी प्रतिज्ञा को सुनकर, प्रसन्नता पूर्वक तुझे धन्यवाद देने आया था । किन्तु तुझे इस पाप में देख कर मेरा हृदय विदीर्ण हो गया ।

मोती०—हाँ मैंने भी बहुत सोच विचार कर मदिरा के त्याग का निश्चय किया था, परन्तु.....

प्रेम०—परन्तु क्या ?

मोती०—यही कि एक बार जिसे अपनाया उसे त्याग दूँ ? यह वायु का वेग नहीं, जो इस कान से आया और उस कान से चला गया ! मदिरा कोई खिलौना नहीं, जो खेलते २ तोड़ दिया । भोले मनुष्य ! मद्य एक शक्ति है, मद्य यमदूत का एक अस्त्र है । मद, जग की चलती हुई गाड़ी के पहिये में लगा हुआ एक कील है ; जिसके आगे कठोर शक्ति के राजदण्ड झुक गये । मद्य की विनाशक शक्ति तुम्हें मालूम नहीं । मूसलाधार वर्षा में खड़ा रहने वाला भवन मद्य के छींटों से मिट्टी में मिल जाता है । तोप के गोलों के सामने खड़ा रहने वाला बुर्ज, मद्य के स्पर्श से पृथ्वी पर आ जाता है ।

प्रेमचन्द—मद्य की विनाशक शक्ति कितनी ही बलवान क्यों न हो, यदि तुम अपने प्रतिज्ञा का विचार करो, अपनी बुद्धि से काम लो तो तुम अवश्य इसे छोड़ सकते हो ।

मोती०—आज तक मैं भी यही समझता था । परन्तु आज ज्ञात हो गया, कि मद्य के ज़बर्दस्त पंजे से मनुष्य का निकलना असम्भव है ! जिस तरह एक शक्ति हीन पंगुल, नदी के प्रचंड तरंगों से बाहर नहीं निकल सकता; घर में लगी हुई आग को अपनी पामर फूँक से बुझाकर मनुष्य अपने प्राण नहीं बचा



सकता; उसी तरह इस मदिरा सागर में डूबता हुआ मनुष्य, मरने से प्रथम बाहर नहीं आ सकता। प्रेमचन्द ! मद्य से बचने और मदिरा को छोड़ने का एक ही समय है। और वह समय मद्य का, एक प्याला, पीने से प्रथम ही है। चाहे एक घूँट भी मनुष्य अच्छी नियत या किसी आवश्यकता के कारण क्यों न पी गया हो, फिर मदिरा उस पान करने वाले को शक्तिहीन बना कर सदैव के लिये अपना सेवक बना लेती है।

प्रेमचन्द—मोतीलाल ! मेरे सम्मुख भी तू मद्य पीने से हाथ नहीं खींचता है।

मोती०—हरेक शराबी के उम्र की सम्मोहावस्था, उम्मादावस्था और प्रलयावस्था यही ३ अवस्थायें होती हैं—और इनमें से हरेक का आरम्भ मद्य के एक प्याले से होता है। थकन मिटाने के लिये, आनन्द उठाने के लिए, शोक निवारण करने के लिए, अथवा मित्रों के आग्रह या अपनी इच्छा से मद्य पीयो; परन्तु हरेक जाति में इसका श्री गणेश यही 'एक प्याला' है। सम्मोहावस्था में, मद्य पीते ही विचार शक्ति पर भूल का पर्दा पड़ जाता है। मनुष्य को शोक, कष्ट, इत्यादि का कुछ ध्यान नहीं रहता। और आज एक तो कल दो, परसों तीन प्याला इसी तरह रोज वह मद्य को बढ़ाता जाता है। अतः सम्मोहावस्था के अन्तिम दिन यह होता है, कि बैठक समाप्त हो जाने पर भी मनुष्य का मन पीने से नहीं भरता और फिर उसी समय से उम्मादावस्था का आरम्भ हो जाता है। उम्मादावस्था में शरीर और मन को जिलाने के लिए मनुष्य मदिरा को अन्न से भी अधिक पान करता है, परन्तु स्मरण-शक्ति ठीक होने पर वह अपने ऊपर घृणा करता



और हजारों बार मद्य छोड़ने की प्रतिज्ञा करता है। दरिद्रता और मर्यादा का ध्यान उससे मद्य छुड़ाने को विवश करता है। परन्तु निर्जीव शरीर और कमजोर दिलके कारण वह दिन पर दिन अधिक पीने लगता है। प्रेमचन्द ! उस दिन लक्ष्मी के सामने प्रतिज्ञा करते समय मुझ मूर्ख को इस बात का ध्यान नहीं था, कि आज मेरे जीवन में प्रलयावस्था का आरम्भ होगा। मुझे देख कर शोक न करो, मेरे कार्य को आश्चर्य पूर्ण नेत्रों से न देखो। इतनी देर की बातें सुन कर तुम्हें ज्ञात हो गया होगा कि मेरी व्याख्या केवल पश्चात्ताप की ही नहीं वरन् निराशा की है। मेरी आयु की यह तीसरी प्रलयावस्था है। पहली अवस्था में मनुष्य मद्य को नहीं छोड़ता—दूसरी अवस्था में मदिरा मनुष्य को नहीं छोड़ती और तीसरी अवस्था में दोनों एक दूसरे को नहीं छोड़ते। अतः विवश होकर मनुष्य इस अवस्था में आठों पहर नशे में रहने के कारण रोगी बन कर अपने प्राण को गँवा देता है। (शराब पीना)

प्रेम०—मोतीलाल २ यह क्या करता है ?

मोती०—क्या करता हूँ ? तुम मेरे मित्र हो। प्राण से अधिक प्यारे हो। परन्तु तुमसे भी जो मेरा अधिक मित्र और प्यारा है, उसी के सन्मान का प्रयत्न करता हूँ ! उपवास, दुःख कष्ट का नाश किससे होता है ? मृत्यु से। संसार में आशा न पूरी होने के कारण मनुष्य मरते समय निराशा से किसकी ओर देखता है ? मृत्यु की ओर। वही मृत्यु एक दिन मुझे भी आयेगी। मृत्यु के उग्ररूप के सामने जाते हुए मेरा हृदय भयभीत न हो, इस लिए उसको मदिरा देवी की सहायता से



वज्र बना रहा हूँ ! प्रेमचन्द ! जिस प्रकार दूसरे का रक्तपात करने से मनुष्य के सिर पर खून सवार हो जाता है, उसी प्रकार मैं स्वयं अपनी आत्महत्या करता हूँ और उसका खून मेरे सिर पर चढ़ गया है ।

प्रेम०—परन्तु इस तरह आत्महत्या करने का कारण ?

मोती०—केवल एकही कारण । वही 'एक प्याला' ।

प्रेम०—एक प्याला ? आखिर इस एक प्याले में क्या स्वाद है—इससे क्या लाभ है ?

मोती०—इससे क्या लाभ है ? सुनो, जो कृष्ण के मुख में विश्व-रूप-दर्शन से यशोदा को नहीं हुआ था, वह इसमें तुम्हें दिखाई देगा । देखो ! स्त्री जाति के शृंगार के लिए समुद्र के तल से जितनी मोतियाँ बाहर निकली हैं, उससे १० गुना स्त्रियों के आँसू के मोती इस एक प्याले में डूबे हैं । जगत् में शासन करने वाले सम्राट सिकन्दर ने मद्य के आवेश में कसाई बन कर अपने मित्र का खून किया था । देखो, मुर्दे को जीवित करने वाले शक्तिमान दैत्यगुरु शुक्राचार्य ने भी अपनी संजीवनी शक्ति को इस एक प्याले में डुबा दिया था । छुपन करोड़ यदुवंशियों ने भी इसी एक प्याले के कारण अपना सर्वनाश कर डाला । प्रेमचन्द ! क्या यह जानते हुये भी तुम मुझे रोकना चाहते हो ?

प्रेम०—शोक ! महाशोक !!

(शराब पीना, प्रेमचन्द का आश्चर्य में होना)





केशवराम का मकान

(केशवराम का शैय्या पर लेटा हुआ दिखाई देना । चंचला का आना)

चंचला—आज तीन दिवस बीत गये स्वामी का ज्वर नहीं उतरा ! डाक्टर बनर्जी को बुलाया है । देखें ईश्वर क्या करता है । न पास पैसा न कौड़ी, फीस कहाँ से दूँगी ? दवा का दाम कहाँ से लाऊँगी ? हे भगवान ! तूही इनके दुःख को हरने वाला है । हमारी धनहीन अवस्था में सहायता देनेवाला है ।

केशव—चंचला !

चंचला—प्राणनाथ !

केशव—(उठकर) मुझे एक प्याला शराब पिलाओ ?

चंचला—शराब ? शराब कहाँ से पिलाऊँ ? पास में एक पैसा नहीं जो दवा करूँ । डाक्टर साहब आ रहे हैं, उनकी फीस कहाँ से दूँ ?

केशव—अरे मूर्खा ! श्मशान के ठीकेदार को मेरे घर क्यों बुलाती है ? क्या मुझे जीते जी चिता में ले जाना चाहती है ?

चंचला—श्मशान का ठीकेदार ?

केशव—हाँ हाँ, यह हकीम और डाक्टर श्मशान के ठीकेदार हैं । इन्हें नाड़ी देखने तो आता नहीं, रोग का निदान करते नहीं, केवल हाल पर अटकल की दवा देकर रोगियों को बेमौत मार डालते हैं । फीस लेकर अपना उल्लू सीधा करते हैं ।

चंचला—यदि ये लोग रोग को नहीं पहचानते हैं—इलाज करना नहीं जानते हैं तो गवर्नमेंट उन्हें समद क्यों देती हैं ?

केशव—अरे वह सनद नहीं, वरन् सजा देती है ।

चंचला—सजा ?

केशव—हाँ सजा । आज कल कितने ही डाक्टर कैंदी नं० १३ की भाँति एल० एम० एस० एम० बी० बी०, एच० एम० बी० एस० का साइन बोर्ड अपने गरीब बिल्डिङ्ग के गले में लटका कर कुर्सियों के खटमल बने हुए मक्खियाँ मारते हैं ।

चंचला—इस लिए ?

केशव—यदि तू मेरा इलाज कराना चाहती है—मेरे रोग को मिटाना चाहती है, तो किसी शराब पीने वाले डाक्टर या वैद्य को बुला ?

चंचला—शराब पीनेवाला डाक्टर या वैद्य क्यों ?

केशव—क्योंकि वह मेरे रोग को समझेगा ।

चंचला—परन्तु, मैं ने तो डाक्टर बनर्जी को बुलवाया है ।

केशव—बुरा किया । उसने तो रोगियों को यमपुरी पहुँचाने की सौगन्ध खाई है ।

चंचला—यह क्या कह रहे हो ! सहस्रों मनुष्य उनके हाथ से आरोग्य हुये हैं । वह सुनो मोटर का पों पों सुनाई दे रहा है कदाचित्त वह आ गए ?

डाक्टर—(बाहर से) केशवराम ! केशवराम !

चंचला—पधारिए डाक्टर साहब ! गृह में पधारिए ।

डाक्टर—(प्रवेश कर) रोगी कहाँ है ?

केशव—(स्वगत) यह लीजिए दिन के अन्धे आ गए ।

(प्रकट) डाक्टर साहब ! मैं ही रोगी हूँ ।



डाकूर—तुम रोगी हो ?

केशव—क्या हमारे मुख से नहीं मालूम होता है ?

डाकूर—इस स्त्री ने तो कहा था कि रोगी को तीन दिन से बुखार आ रहा है ।

केशव—हाँ साहब ! मुझे ही तीन दिन से बुखार आ रहा है ।

डाकूर—बुखार आता है तो खुले क्यों बैठे हो ? शीघ्र अपने ऊपर कम्बल डालो, सर पर बर्फ रखो !

केशव—बेईमानी, बिल्कुल बेईमानी । (स्वगत) यह डाकूर है या बरसाती मेढ़क—जो मेघ को देखते ही शोर मचाता है । अपने टर टर से रोगी को असाध्य बनाता है ।

डाकूर—इस कमरे की सब खिड़कियाँ और रोशनदान को बन्द कर दो ।

केशव—डाकूर साहब ! यदि खिड़कियाँ बन्द कर दिये जायेंगे, तो स्वच्छ वायु का प्रवेश कैसे होगा ? मकान के भीतर विषैली वायु से रोगी घूँट कर मर जायगा ।

डाकूर—चुप रहो, तुम मुझसे अधिक नहीं जानते हो । लाओ नञ्ज दिखलाओ ।

केशव—ठीक है बाबा । (स्वगत) तुमने तो रोगियों को यमपुरी पहुँचाने का सर्टिफिकेट ही पाया है ।

डाकूर—(केशवराम की नाड़ी देखकर) ओफ ! एक से छप्पन डिग्री पर बुखार है । (अला लगाकर सोने को देखकर) लीभर भी खराब है । क्या तुम कभी शराब पीते थे ?

चंचला—डाकूर साहब ! पीते क्या थे, अब तक पीते हैं ।

डाकूर—अभी तक ?



केशव—कल तक पीया है ।

डाक्टर—मुझे आश्चर्य है, कि तुम अब तक कैसे जीते बच गये ।

केशव—(स्वगत) भाई वाह ! खूब डाक्टर है जो रोगी को जीता देख कर आश्चर्य करता है ।

(डाक्टर का प्रेस्क्रिप्शन Prescription लिखना)

डाक्टर—लो यह (Prescription) दवा मँगाकर दिन में तीन तीन बार पीना और भूल कर भी शराब न छूना । अन्यथा हार्ट फेल कर जायगा—एक झटके में तुम्हारा दम टूट हो जायगा ।

केशव—डाक्टर साहब ! शराब तो एक शक्तिशाली वस्तु है यदि उसको छोड़दूंगा तो फौरन मर जाऊँगा ।

डाक्टर—चुप रहो, बकबक मत करो । मेरे आज्ञानुसार चलो ।

चंचला—डाक्टर साहब ! इन्हें खाने के लिए क्या दूँ ?

डाक्टर—चौराई का साग और नेनुएँ की तरकारी ।

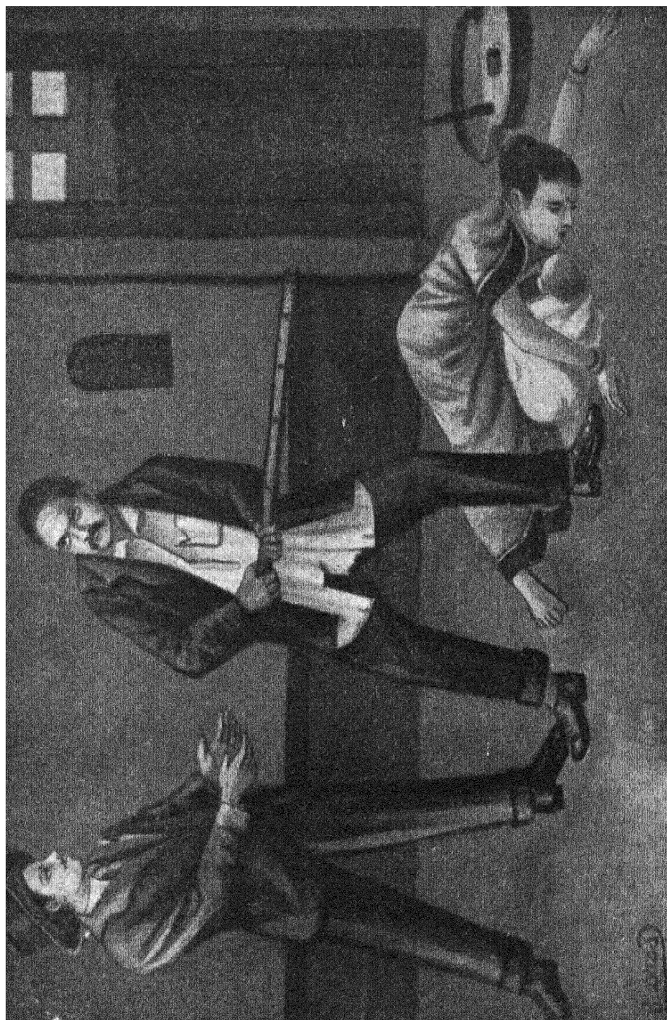
केशव—क्या मैं कोई गाय या भैंस हूँ, जो मुझे यह साग-पात खाने को बताते हो ?

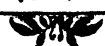
डाक्टर—गाय-भैंस नहीं तो और क्या हो ? लाओ मेरी फीस चुकाओ ।

चंचला—डाक्टर साहब ! हम लोग बहुत गरीब हैं । दूसरी बार जब आप पधारेंगे तो दोनों बार की फीस एकही साथ दे दूँगी ।

डाक्टर—तुम गरीब हो तो इसे खैराती अस्पताल में क्यों नहीं ले गई ? क्या मैं कोई बनिया हूँ, जो उधार का शब्द सुनाती हो ?

(मारवाड़ी रूपचन्द का पुलिस और अमीन को लेकर आना)





रूपचन्द—यही है। अमीन साहब ! केशव का मकान यही है।

अमीन—केशव राम ! तुम्हारे मकान के सामान पर कुर्की आई है। यदि तुम कुर्की का रुपया दे दो तो मैं चला जाऊँ, नहीं तो मैं तुम्हारे घर में जो सामान है वह कुर्क कर लूँगा।

केशव—लो एक और आपत्ति आई !

चंचला—अमीन साहब ! मेरे स्वामी इस समय बहुत बीमार हैं। देखिए डाक्टर साहब भी खड़े हैं। हमारी दशा पर दया करिये—मैं दो चार दिन में रुपये का बन्दोबस्त कर के अदालत में जमा कर दूँगी।

अमीन—यह सरकारी कानून है। सरकारी आज्ञा कुछ घर की खेती नहीं जो आज न बोया कल बोया ! यदि आज और इसी समय दे सकती हो तब तो ठीक है, अन्यथा सामान कुर्क करता हूँ।

रूपचन्द—अमीन साहब ! यह लोग इस तरह रुपये नहीं देंगे। सामान कुर्क कीजिए।

अमीन—रामनाथ ! अन्दर से जो सामान है ले आओ।

डाक्टर—अरे रे यह क्या ? बस यहाँ से अब खिसक देना चाहिये अन्यथा बैठे बिठाये अपने गले में फाँसी आयेगी। गवाही में जाना पड़ेगा।

(डाक्टर अपना बैग उठाकर जाना चाहता है)

अमीन—यह सामान क्यों उठाते हो ?

डाक्टर—यह सामान मेरा है !

अमीन—तुम्हारा हो या किसी का। इस समय इस मकान में पाया गया है। इसलिए यह माल कुर्क हांगा। यदि यह आपका है तो अदालत से जा कर ले आइएगा।

डाक्टर—अजी अमीन साहब ! जब आप मेरी रोजी का ठिकरा ले जाइयेगा तो मैं पेशेन्ट का इलाज किस भाँति करूँगा ?

अमीन—मैं यह सब कुछ नहीं जानता। यदि आप इसे लेना चाहते हैं तो कुर्की का रुपया चुकाइए और इसे ले जाइए।

केशव—भाई वाह ! खूब ! तबेले की बला बन्दर के सिर ?

(रामनाथ का अन्दर से कई खाली बोतलों का लाना)

रूपचन्द—यह क्या ? शराब की बोतल !

चंचला—नहीं तो क्या शराबी के घर चान्दी के बर्तन निकलेंगे ?

डाक्टर—अमीन साहब ! यह तो आप अन्याय करते हैं।

अमीन—तुम कहो, परन्तु मैं तो इसे न्याय समझता हूँ।

डाक्टर—तो क्या आप की मेहरबानी न हांगी ?

अमीन—मैं विवश हूँ। डाक्टर साहब ! डिग्री के रुपये चुका दीजिए। समझियेगा एक रोगी से फीस का रुपया नहीं मिला। कुछ अधिक नहीं केवल ५०) पचास रुपये तो चाहिये।

डाक्टर—भाई वाह ! यह तो वही मसलःहुई कि बनाने गया गनपती और बन गया मारुती।

अमीन—अच्छा, अब व्यर्थ समय न गवाँइए। रुपया चुकाना हो तो चुकाइए।

डाक्टर—अच्छा, लो भाई ! मजबूरी सब कुछ कराती है। फँसी बिल्ली चूहों से कान कटाती है।



(डाक्टर का भरीन को रुपया देना रुपचन्द वगैरह का लेकर
जाना । केशव और चंचला का हँसना)

गाना

केशव—कैसा फँसा यह बन्दर मुखन्दर—
चंचला—लेने के पड़ गये देने जी ॥ कैसा०—
केशव—आया था वो मुझे फँसाने—
चकमा देकर रुपये कमाने—
चंचला—ठग विद्या से लेने जी ॥ कैसा०—
केशव—चलो बला टली एक दुःख हटा—
दोनों—मद्य पान का पाप कटा ॥ कैसा०—



लक्ष्मी का मकान ।

(लक्ष्मी का बालक को सुलाते हुये दिखाई देना)

लक्ष्मी—सो जाओ मेरे लाल ! मेरे नैन के तारे ! सो
जाओ । पुत्र ! दुःख में तुम्हें भी अपने माता-पिता के कष्ट
को सोचना चाहिए । मेरे हृदय-रत्न ! भूख से व्याकुल होकर
इस तरह न मरना चाहिए । मैं जाना हूँ पाषाण नहीं कोयल

हृदय रखती हूँ—तुम्हारे रोने से मेरा हृदय टुकड़े २ हो रहा है। यह तुम्हारे मुख पर फिर अधीरता के चिन्ह क्यों प्रकट हो रहे हैं? क्या तुम मुझे रोती देख कर रो रहे हो? न रोओ लाल! न रोओ। मुझ अभागिनी के भाग में तो रोना ही रोना बड़ा है। आज शपथ खाकर तुम्हारे पिता गये थे, परन्तु मालूम हुआ है कि वे फिर मदिरा पीने लगे। अब इस जग में मेरे बच्चे तेरा मेरा कौन आधार है? तुम फूलो फलो, ईश्वर तुम्हें सुखी करे! आशा है तुम बड़े होकर मेरा दुःख निवारण करोगे सो जाओ।

लक्ष्मी०—(चंचला को आते देख कर) कौन चंचला? भाई केशव की तबीयत अब कैसी है?

च०—वैसी ही है। परन्तु बहन! यह तुम्हारी क्या दशा है?

लक्ष्मी०—कहावत है—जैसी इच्छा वैसा फल। पिता के घर दासी को जब गेहूँ पीसते समय गाना गाने हुए सुनती थी तो मेरी इच्छा होती थी कि मैं भी इसी तरह पीसूँ और गाऊँ। परन्तु यह मैं क्या जानती थी, कि दुर्दैव मेरी उस इच्छा को उस बाल अवस्था की चाह को इस समय पूरा करेगा? चंचला! संध्या समय में जब यह पीसा हुआ आटा ले जाओगी, तो इसकी क्या मजदूरी लाओगी?

चंचला—केवल ६ पैसा।

लक्ष्मी०—क्या वह पैसा इस समय नहीं मिल सकता?

च०—आटा बिये बगैर कैसे मिल सकता है?

लक्ष्मी०—क्या अपने दुःख को कहने और प्रार्थना करने पर भी नहीं मिल सकता?



चं०—नहीं बहन, वे लोग कठोर हृदय रखते हैं। परन्तु इस समय पैसे की इतनी आवश्यकता क्या है ?

लक्ष्मी०—(स्वगत) आह, इससे किस तरह कहूँ कि घर में दीपक तक जलाने के लिए एक पैसा नहीं है। परमेश्वर ! नारायण ! कुबेर का भंडार तेरे पास होते हुए भी मैं यों अन्न अन्न के लिए कलप रही हूँ !

चं०—बहिन ! चुप क्यों होगई ? कहो पैसे की इस समय क्या आवश्यकता है ?

लक्ष्मी०—क्या कहूँ चंचला ! आज मेरे घर से अन्नपूर्णा रुष्ट होगई हैं। प्रातःकाल से उनके मुँह में एक अन्न नहीं गया। मेरे पास केवल दो पैसे थे सो बच्चे के दूध मँगाना है।

चंचला—केवल दो पैसे ? (स्वगत) यदि मैं दूँगी तो न लेंगी अब क्या करूँ ? (प्रकट) अच्छा, मैं जाकर आँटा वाले से प्रार्थना करती हूँ और कुछ माँगकर अभी ले आती हूँ।

लक्ष्मी०—अच्छा, पहले लड़के के लिए दूध ले आओ, फिर जाना।

चंचला—बहन ! तुम अब तक दादा का इतना ध्यान करती हो जिसने...

लक्ष्मी०—बस चंचला ! चुप रहो। इस विषय में आगे कुछ न कहो ! जाओ बर्तन लेकर बच्चे के लिये दूध ले आओ।

(चंचला का जाना, लक्ष्मी का बच्ची पीसना, बच्चे का जागना)

लक्ष्मी०—मेरे लाल ! तुम जाग गये ? उपवास तुम्हें निद्रा में भी बेचैन कर रहा है। न घबराओ पुत्र ! जिस ईश्वर ने कष्ट दिया है वही दूर भी करेगा। अब हमारे दुःख और कष्ट का अंतिम

समय निकट आ गया है। रात के बाद दिन अवश्य आता है। हैं! यह क्या? तुम आगये और इस दशा में! हे भगवान! मेरे भाग्य से क्या लिखा है?

(मोतीलाल का नशे में गिरते पड़ते प्रवेश करना)

मोती०—लक्ष्मी! इधर आ। मुझे अभी और पीना है। अधिक नहीं केवल एक प्याला। ला, पैसा दे। शीघ्र पैसा दे।

लक्ष्मी—पैसा कहाँ से लाऊँ? मेरे पास तो कुछ भी नहीं है।

मोती०—तू झूठ बोलती है। चल पैसा देती है या तेरे प्राण तूँ?

लक्ष्मी०—मैं आपके चरणों की सौगंध खाकर कहती हूँ, कि मेरे पास अब एक पैसा नहीं है। सिर्फ दो पैसा था उसका बच्चे के लिये दूध मँगाया है।

मोती०—इसका गला घोट दे। इसको मार डाल।

लक्ष्मी—तो क्या बच्चे के लिए दूध भी न मँगाती?

मोती०—निर्लज्ज! मेरे वास्ते पैसा नहीं और लड़के के लिये है? मुझ से अधिक लड़का प्यारा है? तू पतिव्रता नहीं भ्रष्टा है। निकल जा—मेरे घर से अभी निकल जा।

लक्ष्मी—प्राणाधार! यह आप क्या कह रहे हो?

(लकड़ी उठाता है)

मोती०—बस, इसी लकड़ी से आज इसे यमलोक पहुँचाऊँगा। यह मेरे मार्ग में रोड़ा है—इस पैसे के लिये……

लक्ष्मी—(स्वगत) ईश्वर २ अब क्या करूँ? किस प्रकार इनसे बालक के प्राण बचाऊँ? ये नशे में बेसुध हो रहे हैं। इन्हें कुछ नहीं बिचार है। (प्रगट) प्राणेश्वर!



मोती०—प्राणेश्वर की बच्ची ! हट जा । ले कम्बख्त, दूध पी ।

(लाठी मारना)

लक्ष्मी०—हाय २ ! मेरा बच्चा, मेरा लाल !! (मूर्छित होकर गिरना । लड़के का मरना, ताराचन्द का प्रवेश)

तारा०—ओ निलज्ज ! पापी ! यह तूने क्या किया ?

मोती०—कुछ नहीं जो हुआ अच्छा हुआ । लाओ, मदिरा लाओ ? एक प्याला ! एक प्याला !!

टेबला झाप ।



मोतीलाल का मकान

(मोतीलाल का शराब पीते दिखाई देना । ताराचन्द, प्रेमचन्द का पुलिस के साथ आना)

तारा०—पकड़ लो, यही है वह शराबी खूनी । देखो, इस अन्यायी के निर्दयी हाथों से मृत्यु को प्राप्त हुआ बालक का शव पड़ा है—मेरी बहिन के जखमी शरीर से रक्त बह रहा है ।

दारोगा—क्रोध न करो, शान्त हो । पहले लक्ष्मी का बयान ले लेने दो ।



ताराचन्द—बहिन लक्ष्मी ! उठ ।

प्रेमचन्द—भाई ताराचन्द ! धैर्य धरो, घबराओ नहीं ।

तारा०—तुम्हीं कहो, जिसका मकान जल रहा हो—
जिसका घर उजड़ रहा हो—जिसका जहाज डूब रहा हो
वह कैसे धैर्य धर सकता है ? (मोतीलाल से) दुष्ट चांडाल !
पाप के अवतार ! तूने मेरे घर के दीपक को बुझा दिया ।

प्रेम०—ताराचन्द ! कर्म में जो लिखा था, वह आगे आया ।
जो कुछ होना था वह हो गया । सांप निकल गया, समय
ने धोखा दिया ; अब चिन्ह पर लकड़ी मारने से क्या लाभ
होगा ?

तारा०—प्रेमचन्द ! मेरे क्रोध को शान्त करने की चेष्टा
न करो—दहकती हुई आग पर पानी का छीटा न मारो ।
मूसलाधार वर्षा को कागज़ के छाते से न रोको । मैं इससे
प्रतिकार लूँगा और अति भयंकर लूँगा ।

प्रेम०—भाई साहब ! शान्त—शान्त ।

तारा०—तुम मुझे ही शान्त करने की चेष्टा करते हो ?
सौचो, बिचारो, पापाणप्रतिमा होती तो भी इस प्रसंग को
देखकर इसे धिक्कारती और दया के आँसू बहाती । फिर मैं
मनुष्य होकर, मानुषी हृदय रखकर किस तरह मौन धारण कर
सकता हूँ ? देखो २ शोक और दुःख ने इस स्त्री के शरीर का
रक्त चूस लिया । इस मद्यपी के अत्याचार ने इसे इस अवस्था
को पहुँचा दिया । जिस स्त्री का पिता लक्षाधीश है, उस स्त्री से
इस शराबी ने अपना पेट भरने के लिए चक्की पिसवाया । हमारे
घर में जितना दूध कुत्ते के बच्चे पीते समय पृथ्वी पर गिरा



देते हैं, उतना भी इस निर्दयी ने इस निर्दोष बालक का पेट भरने के लिये न दिया। आह, इनकी ओर देखकर दया ममता रो रही हैं। पत्थर भी इनके दुःख को देख कर मोम हो जाता, परन्तु यह पामर अधम इनके लिये बज्र-हृदयी बन गया। यदि इसके गले की फाँस बनाने के लिए लक्ष्मी के गले का मंगल-सूत्र तोड़ा जाय तो उचित होगा।

लक्ष्मी—भाई, तुम कब आये? वह भूखे उपवासी हैं; कृपया उनकी सुधि लो। कल से उनके मुख में एक दाना भी नहीं पड़ा है—इन्हें भोजन तो करा दो।

तारा०—भोजन कराने की अपेक्षा इसे काल का एकही कौर बनाऊँगा। देखो! यह दारोगा साहब हैं, जो यह तुम से पूछें उसका ठीक २ उत्तर दो। इस शराबी ने तुम्हारे साथ क्या २ अन्याय किया? तुम्हें क्या कष्ट पहुँचाया स्पष्ट शब्दों में कहो।

दारोगा साहब—लक्ष्मी! इसके अत्याचारों को बताकर न्याय के मार्ग में प्रकाश डालो।

लक्ष्मी—इन्होंने मेरे साथ कुछ नहीं किया। आप से जिसने कहा उसने मिथ्या कहा।

दारोगा०—असत्य न बोलो—मिथ्यावादी न बनो।

लक्ष्मी—यदि मेरा कहना असत्य है तो आपही कहिये इन्होंने क्या अपराध किया? किस पर अत्याचार किया?

दारोगा०—यदि इन्होंने कुछ नहीं किया, तो इस लड़के को क्या हुआ? तुम्हारे सिर से रक्त क्यों बह रहा है?

लक्ष्मी—दो रोज के उपवास के कारण मुझे क्षण क्षण में मूर्छा आती थी। बालक को मैं लेकर उठी, अचानक मूर्छा



आगई और मैं चैतन्य हीन होकर गिर पड़ी। मेरा बच्चा मेरे नीचे दब गया और मेरा सिर फट गया।

तारा०—बिलकुल असत्य बात है !

दारोगा०—फिर इस लकड़ी में रक्त कैसे लगा ?

लक्ष्मी—रक्त लगे हुए हाथों से मैं लकड़ी टेकतो हुई यहाँ तक आई।

प्रेम०—धन्य है। लक्ष्मी ! तुझे धन्य है। सीखो सीखो, ऐ संसार की स्त्रियों ! अपने भूले हुए पतिव्रता धर्म को इस सती स्त्री से सीखो।

दारोगा०—क्या यह सब सत्य है ?

लक्ष्मी—हाँ सर्वथा सत्य है। मेरे कथन पर विश्वास करिये।

तारा०—नहीं नहीं, यह बिलकुल झूठ है, सरासर धोखा है। लक्ष्मी ! क्यों असत्य बोलतो है ? तुझे मेरी शपथ है तू सत्य बात कह !

लक्ष्मी—भाई ! तुम क्यों हठ कर रहे हो ? मैंने जो कुछ कहा वह सब सत्य है।

तारा०—दारोगा साहब ! इसका बयान बिलकुल असत्य है।

दारोगा०—ताराचन्द ! अब मैं कुछ नहीं कर सकता। हमारा क्रोध कितना ही भयंकर हो, फिर भी इसकी पुन्याई के आगे व्यर्थ है। न्याय का शस्त्र कितना ही तीक्ष्ण हो, परन्तु एक पतिव्रता के पातिव्रत की ढाल के आगे वह असमर्थ है।

तारा०—परन्तु इसके झूठे बयान, पर अपराधी को छोड़ना उसे और भी ठीठ बनाना है।



दारोगा—गंगा की प्रचण्ड तरङ्गों पर तैरने वाले पर अग्नि फेंकना गोया अपनी मूर्खता को प्रगट करना है ।

प्रेम०—लक्ष्मी ! तू धन्य है । तेरी पति-भक्ति सराहनीय है । तूने दिखा दिया, कि इस पुण्य-भूमि में अभी आर्य-ललना हैं, जिनको आर्यावर्त नाम अब तक शोभा देता है ।

लक्ष्मी—भाई ! प्रेमचन्द ! आप कहाँ जाते हो ? मेरा अन्तिम समय निकट है । अब मेरे बाद तुम्हारे सिवाय इनका जग में और कोई नहीं है, अतः इस रत्न को जिसे आज तक मैं अपने प्राण से अधिक प्रिय जानती थी, तुम लोगों के सहारे छोड़े जाती हूँ । भाई ! मेरे सौभाग्य को संभालना । मैं अपना सौभाग्य-सिन्दूर तुम्हारी रक्षा में दे कर मरती हूँ । आशा है तुम और भाई ताराचन्द इनकी रक्षा कर मेरी आत्मा को सुख देंगे ।

तारा०—सुन, ओ ब्रह्मानी मूर्ख ! आँखों वाले अन्धे ! इस देवी के मुख से निकले हुए एक एक शब्द को सुन ।

लक्ष्मी—दारोगा साहब ! मुझे क्षमा करेंगे, आप को बड़ा कष्ट हुआ ।

दारोगा—चलो ताराचन्द ! अपनी अर्जी फाइल से निकाल लो तो मैं इस भगड़े से मुक्त हो जाऊँ !

(प्रेमचन्द, ताराचन्द और दारोगा का जाना ।)

मोती०—यह क्या हुआ और यह सब क्यों हो रहा है ? एक प्याला-एक घूँट का त्याग न करने से ? इस मदिरा-देवी को न छोड़ने से यह सब उत्पात हो रहा है !

लक्ष्मी—प्राणनाथ ! कृपा कर मेरे निकट आओ ।

मोती०—क्या है ? क्या कहती है ?

लक्ष्मी—मेरा सिर अपनी जाँघ पर रख लो, मेरा हाथ अपने हाथ में ग्रहण कर लो ।

मोती०—लक्ष्मी ! यह तेरी कैसी दशा !! तू इस शराबी के कुकर्मों की बोझ से दब गई । अपशब्दों से मैंने तेरा अपमान किया । कभी तुझे पेट भर भोजन, तन के लिये वस्त्र न दिया । तेरे नेत्रों के सामने तेरे पुत्र को मार डाला । उदार हृदय की लक्ष्मी ! मुझे शाप के एकही शब्द से भस्म कर दे, किस लिये तूने झूठ बोल कर मुझे बचाया ? देवी ! मुझे क्षमा कर ! ये अपराधी, अधम, पातकी तुझसे क्षमा चाहता है ।

लक्ष्मी—नाथ ! अर्होभाग्य उस स्त्री का जिसका मरण पति के चरणों में हो । इस से बढ़कर स्त्री को क्या चाहिये ? नाथ ! मेरी विनती केवल इतनी ही है कि इस जग में आपका कोई नहीं है ? आपके सुख दुःख का सहायक वही एक ईश्वर है । मेरे भाग्य में इतनी ही सेवा करनी लिखी थी । इस लिये प्राणनाथ ! अन्तिम प्रार्थना है कि अब कभी मद्य न पीना । यदि मेरी मृत्यु के पश्चात् आप पर कोई कष्ट आयेगा, तो मैं बैकुण्ठ में भी शान्ति न पाऊँगी ।

मोती०—लक्ष्मी ! आजीवन मैंने तेरी पवित्र आज्ञा को स्वीकार नहीं किया । मुझे ऐसा जान पड़ता है कि तेरी इस अन्तिम आज्ञा का पालन करने के योग्य अब मैं नहीं रहा । अब मेरे जीवन और मृत्यु में केशल वही एक ही प्याला है । अतः मुझे उपदेश देना व्यर्थ है । हैं ! यह क्या ? मेरी ओर निराशा से देख रही है । लक्ष्मी २ ! प्रेमचन्द ! दौड़ो दौड़ो !



ल०—प्रा.....ण.....ना.....! (मरती है)

मोती०—गई ! चली गई । आशा की नेत्रों से देखती हुई चली गई । धोखा, धोखा ! यह, वह, मैं, तू सब धोखा दे रहे हैं । सब धोखा खा रहे हैं । सूर्य दिन को, तो चन्द्र रात को धोखा दे रहा है, सुगन्धी पुष्प को, आत्मा शरीर को और सुन्दरता प्रेम को धोखा दे रही है । स्त्री पति से, पिता पुत्र से धोखा खा रहा है । नहीं नहीं, यह सब चतुराई है । सब अपने सुख और आराम को ढूँढते हैं । मूर्ख समझ कर एक दूसरे को छलते हैं । मोतीलाल ! बस, तू भी अपना आराम और सुख देख । आ ! आ ! मदिरादेवी ! आ ! तू मुझे छल और मैं तुझे प्रसन्न करने की चेष्टा करूँ ?

प्रेम०—(आकर) मोतीलाल ! ऐसे समय तुम कहाँ जा रहे हो ?

मोती०—वह देखो । वह कहाँ गई ? आकाश किस की सभा का मण्डप है ? सूर्य और चन्द्र किसके घर के दीपक हैं ? चमकने वाले तारे किसके भवन की शोभा हैं ? पवन किसका पङ्खा है ? धरती किसकी बिछीना है ? महासागर किसका स्नान-कुण्ड है ? गंगा-जमुना किसके नेत्रों की आँसु-धारा है ? सब मिटने वाले हैं—सब धोखा दे रहे हैं । अतः हट जाओ मेरे मार्ग से हट जाओ । मुझे धोखा न दो । जो मैं कर रहा हूँ मुझे करने दो । (चले जाना)

प्रेम०—दया ! हे ईश्वर दया ! (शोक में सिर पकड़ना)

टेब्ला

(सीन का धीरे २ गिरना)



आर्य-मदिरा-मण्डल ।

(केशवराम एक पलंग पर सोया है । खुदाबख्स, विष्णु शास्त्री,
दादा भाई, इत्यादि का बातें करते हुए दिखाई देना)

खुदाबख्स—क्यों शास्त्री जी ! कल की रात कैसी कटी ?

विष्णु०—अजी बहुत कठिनता से । कल तो केशवराम मर जाता, परन्तु आज के दिन और मदिरा पान करना उसके भाग्य में था, इसलिये बच गया ।

दादा भाई—जभी तो कल रात्री को जरा भी आँखों में नींद नहीं आई ।

१ श०—परन्तु केशवराम तो खूब सोया ।

शास्त्री—वह तो अभी तक सोया ही है ।

खुदाबख्स—कल रात को दवा पिलाया था फिर भी उसका बुखार कम न हुआ ।

विष्णु०—तो उसे जगाकर फिर कोई दवा देनी चाहिये । उस बेचारे के लिये कोई और उपाय करना चाहिये ।

खुदाबख्स—अरे भाई केशव ! यदि यहाँ ही जी भर कर सो लोगे तो वहाँ क्या करोगे ? उठो दवा पीलो ।



केशव—'जागकर' नहीं भाई ! अब औषधि की कोई आवश्यकता नहीं । मुझे उठा कर बिठा लो, अब मेरी मृत्यु निकट है ।

विष्णु०—केशवराम ! धीरज धरो, डरो नहीं । मैं तुम्हें मरने न दूँगा । (खुदाबख्स से) लाओ मदिरा की बोतल लाओ ? (केशव से) भला मदिरा की बोतल सामने रहते हुए भी तुम मर जाओगे ? असम्भव है ।

खुदाबख्श—अरे रे ! यह आँखें क्यों बदल रहा है ? इसे क्या हो गया ?

शास्त्री—जाओ जाओ गंगा-जल लावो, तुलसी-पत्र मंगावो । केशव राम २ ! क्या डाकूर को बुलाऊँ ?

केशव—नहीं भाई ! मुझे कुछ नहीं चाहिए । केवल मरते समय थोड़ी सी मदिरा चाहिये । तुलसी-पत्र के बदले शराब के बोतल का काग मेरे मुँह में लगा दो, कि हिचकी आने में मदिरा गिर न पड़े ।

विष्णु०—वाह, वाह, इसे कहने हैं मदिरा का सच्चा उपासक ! केशव राम ! धैर्य रखा, अगले जन्म में तुम इस से भी एक हाथ बढ़कर मद्यपी युवक होगे । भगवान ने गीता में इसी लिए कहा है—

यं यं वाऽपि स्मरन् भावं त्यज्यन्त्यन्ते कलेवरम् ।

तं तमैवैति कौन्तेय सदा तद्भावभाषितः ॥

केशव—(मदिरा पीकर) मित्र शास्त्री जी, खुदाबख्स ! अब मैं मरता हूँ । क्या तुम लोग मेरी इच्छा और वसीयत को सुन कर उसे पूरा करोगे ?



विष्णु०—अवश्य पूरा करेंगे ।

केशव—अच्छा, तो देखो मेरे मरने के पश्चात् मेरे गृह में शराब की दूकान खोलना और उसका नाम केशव राम मद्यालय रखना । उसे सारी रात खुला रहने के लिये गव-मैन्ट से परवाना ले लेना, ताकि समय पर किसी मद्यपी को मदिरा के लिये कष्ट न पहुँचे । पथिकों और ब्राह्मणों को मुफ्त मदिरा पिलाना । विद्यार्थी के हाथ अर्घ्य मूल्य पर वेचना । मेरे श्राद्ध में सत्यपात्र ब्राह्मणों को पानी की जगह मदिरा ही देना । गौ दान, करने के बदले मेरे नाम पर एक पीपा मदिरा नदी में छोड़ देना ताकि मैं उस पर बैठकर वैतरणी पार कर स्वर्गलोक में पहुँच जाऊँ । मित्रों ! मेरी प्रत्येक बातें यदि तुम लोग न पूरा करोगे, तो मेरी आत्मा भूत बन कर संसार में भटकती रहेगी और मुझे मुक्ति न मिलेगी । हाय ! प्राण पखेरू बन रहा है, मदिरा में डूब रहा है ।

विष्णु०—न घबराओ मित्र ! हम लोग कठिन से कठिन आपत्ति भेल कर भी तुम्हारी इच्छा पूर्ण करेंगे ।

खुदा०—और इच्छा पूर्ण करने पर भी यदि तुम भूत हो गए तो हम लोग उस भूत को पकड़ कर मद्य की बोतल में बन्द कर देंगे ।

केशव—हाँ, एक बात यह भी ध्यान रखना, कि किसी के बहकावे में आ कर मदिरा त्यागने का सौगन्ध न खाना । क्योंकि मदिरा छोड़ने वाले की शपथ अधिक दिन नहीं रहती । यह आर्य-मदिरा-मण्डल सदैव स्थापित रखियेगा । हा



मदिरा, मदिरा । शास्त्री जी ! थोड़ी मदिरा और दो—ग्रब यह मेरा अन्तिम प्याला है । आओ तुम लोग भी मेरे साथ मेरी हेल्थ ड्रिंक करो ।

शास्त्री—(शराब का प्याला उठाकर) केशवराम ! दू योर हेल्थ ।

(सबों का शराब पीना)

केशव—बस, मरते एक प्याला—जीते एक प्याला, हँसने एक प्याला, रोते एक प्याला । हाय, मदिरा ! मदि.....

खुदा०—अररर यह तो पृथ्वी ट्रेक गया । चलो आज से मदिरा का बाजार ठंडा हो गया ।

शास्त्री—मदिरा से उत्पन्न हुआ था और मदिरा में समाप्त हो गया ।

१ श०—चलो, भाइयों ! इस प्रेत को इसके घर पहुँचाओ ।

खुदा०—यारों ! इसको सम्भल कर उठाना । यह मदिरा पति का प्रेत है ।

दादा भाई—यह मदिरा की रथी है ।

विष्णु—बोलो श्री मदिरा का बोल बाला ।

सब—और पीयो “एक प्याला” ।

(सब का केशव को लेकर जाना)





रास्ता

(मोतीलाल का विचारते हुये आना)

मोतीलाल—रात्रि अधिक अंधेरी होने के कारण चारों ओर ऐसा सन्नाटा छाया है मानो भय का साम्राज्य स्थापित हो गया है। हर एक प्राणी अपने अपने घरों में निद्रा देवी की पूजा कर रहा है। परन्तु तू, ओ हतभागी मोतीलाल ! तू मदिरा के लिये बेचैन है। आज दो बोतल पी जाने पर भी तुझे नशा नहीं हो रहा है ? इसका कारण लक्ष्मी के बिछुड़ने का शोक है। इस शोक को मिटाने के लिये मदिरा कहाँ से लायेगा ? तेरे पास तो एक पैसा भी नहीं है [कुछ देर सोचने के बाद] मोतीलाल ! यह तू क्या सोच रहा है ? तेरे हृदय में चोरी करने की यह कैसी नीच भावना उत्पन्न हो रही है। (सोंचकर) चल मोतीलाल ! चल ! जो होगा देखा जायगा। इस व्याकुल हृदय को शीतल बनाने के लिये—अपनी बेचैनी मिटाने के लिये यह कार्य भी कर। ठहर, ओ नीच हृदय ! तेरी औषधि का प्रबन्ध करता हूँ। तेरे लिये सब कुछ तो कर चुका, अब चोरी भी करूँगा। यह किसका भवन है ? यह तो किसी धनाढ्य का ज्ञात होता है। बस इसी भवन में अपना कार्य सिद्ध होगा।

[जाना । सीन का उठना]



मकान का बाहरी हिस्सा

(मोतीलाल का खिड़की से मकान के अन्दर जाना, प्रेमचन्द का सोते हुये दिखाई देना)

प्रेमचन्द—(निद्रा में) मोतीलाल ! मोतीलाल !!

मोती०—हैं ! क्या जाग गया ? यह कौन ? यह तो प्रेमचन्द सो रहा है ।

प्रेमचन्द—छोड़ दे २ । मोतीलाल ! इस तुच्छ वस्तु को छोड़ दे । देख लक्ष्मी कह रही है—मैं कह रहा हूँ, कि मद्य को छोड़ दे । तेरी इस नीच अवस्था को देख कर नीच से नीच जाति भी त्राहि त्राहि चिल्ला रही है (सीन का फटना, मोतीलाल का चोरी करते दिखाई देना)

प्रेम०—(निद्रा में) मोतीलाल ! तू अब यह नीच कर्म भी करने लगा । छी: छी: ।

मोती०—हैं ! यह क्या कह रहा है ? क्या जाग रहा है ? नहीं सोता है । निद्रा में स्वप्न देख रहा है ! सत्य है कि मनुष्य का हृदय जिसे अधिक प्रेम-दृष्टि से देखता है, स्वप्न में भी उसे वही दिखाई देता है ।

प्रेम०—धिकार है धिक्कार है । तेरे इस जीवन और इस कार्य पर धिक्कार है । ओ अधम ! तू हिन्दू-जाति में उत्तम है, उच्चवंश में देव-मूर्ति है । ऐसे कुल का पुत्र और चोरी का कर्म ? ओ पामर ! अपनी अवस्था, अपनी मर्यादा का बिचार कर । इस तेरे पवित्र जीवन को किसने अपवित्र बनाया ? किसने घृणा के योग्य बनाया ? मदिरा ने । पापी ! अब तू उसके लिये चोरी करता है ? (लक्ष्मी की आत्मा का आना)

मोती०—लक्ष्मी २ प्राणप्यारी लक्ष्मी ! हैं, यह क्या तू रो रही है ? मेरी ओर घृणा से देख रही है ? सब धिक्कार रहे हैं सब मुझे घृणा से देख रहे हैं । आह, आँखें खुर्ली पर सूर्य अस्त हो जाने पर । होश आया पर समय निकल जाने पर (कुछ विचार करने के बाद) किन्तु नहीं, जाने दो । जो गया वह गया, अब मैं भी जाऊँगा । यह सोच विचार व्यर्थ है । जिस कार्य के लिये आया हूँ उसे पूरा करके यहाँ से चलना चाहिये ।

(अलमारी को तोड़ कर मदिरा के बदले विष निकाल कर पीना)

प्रेम०—(जाग कर) कौन ? मोतीलाल ! हैं, मैं जाग रहा हूँ ? या स्वप्न देख रहा हूँ ?

मोती०—नहीं, प्रेमचन्द ! तुम जागते हो । तुम्हारा स्वप्न नहीं—यह सच्ची घटना है ।

प्रेम०—यह क्या हाथ में मदिरा का बोतल ? जिसने इतना अनर्थ किया वही मदिरा ?

मोती०—हाँ, प्रेमचन्द ! यही वह मद्य है, जिसने मेरा अनर्थ कर मुझे दर दर भीख मँगाया है । यही चारो खंड में अनर्थ का



साम्राज्य चलाता है। इसी के कारण पुत्र पिता का खून करता और निरोग रोगी बनता है। गायत्री-मंत्र से पवित्र ब्राह्मण इसकी आखेट बनकर अपना सर्वनाश करता है। मैंने तुमसे प्रथम भी कहा था कि मद्य को छुड़ाने और छोड़ने का वही एक समय है। जब कि मनुष्य पहला प्याला उठाता हो और वह उसके हाथों से छीन कर फेंक दिया जाय। नहीं तो उसे भी मेरी तरह जीवन का अन्तिम एक प्याला पीना पड़ेगा। आज मैंने मद्य के अग्नि को तीव्र करने के लिये इसमें रसकपूर डाल कर पान किया है।

प्रेम०—क्या रसकपूर डाला? यह तो बड़ाही भयंकर कार्य किया। तुमने मद्य नहीं बल्कि विष पीया।

मोती०—विष पीया? कोई चिन्ता नहीं। जिस मदिरा ने मुझे चोरी करना सिखाया, जिसने देवी स्वरूपा स्त्री का बध कराया, उससे बचने के लिये विष पान करना ही अच्छा है। तो इस एक प्याले को सारी जनता को दिखाओ और न जानने वाले राजा-रंक, ब्राह्मण-शूद्र, युवा, वृद्ध, मित्र और शत्रु को दिखा कर समझाओ कि वे मद्य के एक प्याले से दूर रहें। अब मेरा अन्तिम समय है—मेरा दम घूँट रहा है, प्राण छूटपटा रहे हैं। प्रणाम। हा, हा (मरना)

प्रेम०—हा। वधाता! यह कैसा अनर्थ! एक मद्य के कारण लगातार तीन प्राणियों का नाश हुआ!! बालक मरा, लक्ष्मी मरी और आज मोतीलाल भी मर गया। मद्य के सागर में सारा वंश डूब गया। (गिलास हाथ में लेकर) दूर हो, ये सर्व

नाशिनी मदिरा ! दूर हो । तू जीते जी मनुष्य को मृत्यु के मुख में पहुँचाती है, जिसने तुझे स्पर्श किया उसको काल का प्रास बनाती है । हे सर्वज्ञेश्वर ! मनुष्य को इस पिशाचिनी से बचाइये—जगत के अन्धे मनुष्य को मदिरा-मार्ग से रोकिये ।

[प्याला पटक देना]

झाप



